हास्य-मंजरी

सङ्कलनकर्ता

हरिश्चन्द्र व्यास



प्रवीण प्रकाशन

बीकानेर

मूल्य ४ ५० रु
एजूकेशनल प्रेस बीकानेर

HASYA MANJARI (Stories)
—Harishchandra Vyas

श्रद्धेय गुरुवर

डॉ० भवानी शंकर सक्सेना

को

सादर समर्पित

हरिश्चन्द्र व्यास

शुभाशीष

O

वाडमय के नौ रसो मे हास्य का विशिष्ट स्थान है। हिन्दी साहित्य म हास्य सबधी रचनाओ का सर्वथा अभाव है और इस ओर अभी तक विपुल प्रयास नहीं हुआ है। इस विधा के लेखक अगुलियो पर गिने जा सकते हैं।

हास्य का जीवन म अपना निराला स्थान है। श्रम भार स थके मानव को नव-स्फूर्ति, हास्य ही प्रदान कर सकता है।

नवोदित लेखको मे श्री हरिश्चन्द्र व्यास शीर्ष स्थान रखते हैं। हास्य-कथाए नाम से इनका एक सकलन इससे पूर्व प्रकाशित हो चुका है। शिष्य के इस दूसरे प्रयास पर मुझे गर्व है।

राजनीति शास्त्र विभाग
डूगर कालेज बीकानेर

—प्रो० सम्पत्त जैन 'सरल'

अनुक्रम

○

हास्य-मजरी

अकबरी-लोटा

O

ला ना भाऊलाल को खाने पीने की कमी नही थी। काशी के ठठेरी बाजार म मकान था। नीचे की दुकानों म एक सौ रुपय मासिक क करीब किराया उतर आता था। बच्चे-बच्चे अभी थ नही। सिफ दो प्राणी का खच था। अच्छा खाते थ अच्छा पहनते थ, पर ढाई सौ रुपय तो एक साथ आग मकत के लिय भी न मिलते थ।

इसलिए जब उनकी पत्नी न एक दिन यकायक ढाई-सौ रुपय की माग पेश की तब उनका जी एक बार जोर से सनसनाया और फिर बैठ गया। जान पड़ा कि कोई बुलबुला है जो बिलाने जा रहा है। उनकी यह दशा देखकर उनकी पत्नी न कहा— 'डरिये मत आप देने में असमथ हो तो मैं अपने भाई स माग लू।"

लाला भाऊलाल इस मीठी मार स तिलमिला उठे। उन्होने किंचित रोब के साथ कहा— "अजी हटो! ढाई सौ रुपय क लिय भाई से भीख मागोगी! मुझ स ले लेना।

'लेकिन मुझे इसी जिन्दगी म चाहिय।'

अजी इसी सप्ताह म ले लेना।

सप्ताह स आपका तात्पय सात दिन स है या सात वष स?'

लाला भाऊलाल ने रौब के साथ खडे होकर कहा— आज से सातवें दिन मुझ से ढाई सौ रुपये ले लेना ।

"मद की बात एक !

'हा जी हा ! मद की एक बात ।

लेकिन जब चार दिन ज्यों यो म यो ही बीत गये और रुपये का कोई प्रबध न हो सका तब उन्हें चिन्ता होने लगी । प्रश्न अपनी प्रतिष्ठा का था अपने ही घर म अपनी साख का था । देने का पक्का वादा करके अगर अब न दे सके तो मन म वह क्या सोचेगी ? उसकी नजरो म उनका क्या मूल्य रह जायगा । अपनी वाह वाही की सकडा गाथाए उसे सुना चुके थे । अब जो एक काम पडा तो चारो खाने चित हो गये । यह पहली बार उसने मुह खोलकर कुछ रुपयो का सवाल किया था । इस समय अगर वे दुम दबाकर निकल भागते हैं तो फिर उसे क्या मुह दिखायेंगे ? मर्द की एक बात वह उसका फिकरा उनके कानो म गूज-गूज कर फिर से गूज उठता था ।

खर एक दिन और बीता । पाचवें दिन घबरा कर उन्होने पण्डित बिलवासी मिश्र को अपनी विपदा सुनाई । सयोग कुछ ऐसा बिगडा था कि बिलवासी जी भी उस समय बिल्कुल शुष्क थे । उन्होने कहा कि मेरे पास है तो नही पर मैं कही से माग जाच कर लाने की कोशिश करूगा और अगर मिल गया तो कल शाम को तुमसे मकान पर मिलूगा ।

यही आज शाम थी — हफ्ते का अन्तिम दिन । कल ढाई-सौ रुपया गिन देना है या सारी हेकडी से हाथ धोना है । यह सच है कि कल रुपया न पाने पर उनकी स्त्री उन्हें डामल फासी न कर दगी — केवल जरा सा हस दगी । पर वह हसी कसी होगी ? इस हसी की कल्पना मात्र स लाला भाऊलाल की अन्तरात्मा म मरोड पदा हो जाता था ।

अभी प० बिलवासी भी नही आए । आज तो उनके आने की

बात थी। इन्हीं का भरोसा था। यदि न आए ? या कहीं रुपय का प्रबध न कर सके।

इसी उधेड-बुन म पडे हुए लाला भाऊलाल छत पर टहल रहे थ। कुछ प्यास मालूम पडी। उन्होने नौकर को आवाज दी। नौकर नहीं था। खुद उनकी पत्नी पानी लेकर आई। आप जानते ही हैं कि हिन्दू समाज म स्त्रियों की कैसी शोचनीय अवस्था है। पति नालायक को प्यास लगती है तो स्त्री बचारी को पानी लेकर हाजिर होना पडता है।

व पानी तो जरूर लाई पर गिलास लाना भूल गई थीं। केवल लोटा म पानी लिये वह प्रकट हुई। फिर लोटा भी सयोग से वह जो अपनी बदशी सूरत के कारण लाला भाऊलाल को सदा से नापसन्द था। था तो नया साल ही दो साल का बना, पर कुछ ऐसी गन्ध उस लोटे की थी कि उसका बाप डमरू और मा क्लिमिली रही हो।

लाला भाऊलाल ने लोटा ल लिया। वे बोले कुछ नहीं, अपनी पत्नी का व अच्छा मानते थे। मानना ही चाहिये इसी को सभ्यता कहते हैं। जो पति अपनी पत्नी का न हुआ वह पति कसा ? फिर उन्होंने यह भी सोचा होगा कि लोटे म पानी हो तब भी गनीमत है अभी अगर चू कर देता हू तो बाल्टी म जब भोजन मिलेगा तब क्या करना बाकी रह जायगा।

लाला भाऊलाल अपना गुस्सा पीकर पानी पीने लगे। उस समय वे छत की मुडेर के पास खडे थे। जिन बुजुर्गों न पानी पीने के सम्बध म यह नियम बनाय थ कि खडे खडे पानी न पियो सोने समय पानी न पियो दौडन के बाद पानी न पियो उन्होंने पता नहीं कभी यह नियम बनाया था या नहीं कि छत की मुडेर क पास खडे होकर पानी न पियो। जान पडता है कि इस महत्वपूर्ण विषय पर उन लोगो न कुछ भी नहीं कहा है।

इसलिए लाला भाऊलाल ने कोई बुराई नहीं की अगर ये इन को मुंडेर के पास खड़े होकर पानी पीने लगे पर मुश्किल से दो एक घूंट भी वे न पी पाये होंगे कि न जाने कैसे उनका हाथ छिटक उठा और लोटा हाथ से छूट गया।

लोटे ने न दाहिने देखा न बायें वह नीचे गली की ओर चल पड़ा। अपने वेग में उल्का को लजाता हुआ वह मानो से आभिन्न हो गया। किसी जमाने में न्यूटन नाम के किसी सुराफाती ने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति नाम की एक चीज ईजाद की थी। कहना न होगा कि यह सारी शक्ति इस समय लोटे के पक्ष में थी।

लाला भाऊलाल को काटो तो बदन में खून नहीं। टठेरी बाजार जैसी चलती हुई गली में, ऊंचे तिमंजिले से भरे हुए लोटे का गिरना हंसी खेल नहीं है। यह लोटा न जाने किस अनधिकारी के मापड़े पर काशी वास का संदेश लेकर पहुंचेगा।

कुछ हुआ भी ऐसा ही। गली में जोर का हल्ला उठा। लाला भाऊलाल जब तक दौड़कर नीचे उतरें तब तक एक भारी भीड़ उनके आंगन में घुस आयी।

लाला भाऊलाल ने देखा कि इस भीड़ में प्रधान पात्र एक अंगरेज है जो नखशिख से भीगा हुआ है और जो अपने एक पैर को सहलाते हुए दूसरे पैर पर नाच रहा है। उसी के पास अपराधी लोटे को भी देखकर लाला भाऊलाल जी ने फौरन दो और दो जोड़कर स्थिति को समझ लिया।

पूरा विवरण तो उन्हें पीछे प्राप्त हुआ।

हुआ था यह कि गली में गिरने के पूर्व लोटा एक दुकान के सायबान से टकराया। वहां से टकराकर उस दुकान पर खड़े उस अंगरेज को उसने सांगोपांग स्नान कराया और फिर उसी के बूट पर जा गिरा। ध्यान देने की बात है कि हिंदुस्तानी लोटा भी वहीं गिरा जहां हिंदुस्तानी

आदमी गिरते हैं।

उस अंगरेज को जब यह मालूम हुआ कि लाला भाऊलाल ही उस हाट के मालिक हैं तब उसने केवल एक काम किया। अपने मुंह को खोल-खोल कर खुला छोड़ दिया। लाला भाऊलाल को आज ही यह मालूम हुआ कि अंग्रेजी भाषा में गालियों का ऐसा प्रकाण्ड कोष है।

इसी समय पं० बिलवासी भीड़ को चीरते हुए आंगन में आते दिखाई पड़े। उन्होंने आते ही पहला काम यह किया कि उस अंगरेज को छोड़कर और जितने आदमी आंगन में घुस आये थे सबको निकाल बाहर किया। फिर एक कुर्सी आंगन में रखकर उन्होंने साहब से कहा— 'आपके पैर में शायद कुछ चोट आ गयी है। आप आराम कुर्सी पर बैठ जाइए।

साहब बिलवासी जी को धन्यवाद देते हुए बैठ गये और लाला भाऊलाल की ओर इशारा करके बोले— 'आप इस शख्स को जानते हैं?' 'बिलकुल नहीं। और मैं ऐसे आदमी को जानना भी नहीं चाहता जो निरीह राह चलतों पर लोटे से वार करे।

मेरी समझ में He is a dangerous criminal' यानि वह खतरनाक मुजरिम है।

नहीं मेरी समझ में He is a dangerous lunatic' (नहीं यह खतरनाक पागल है।)

परमात्मा ने लाला भाऊलाल की आंखों को इस समय यही देखने के साथ खाने की भी शक्ति दे दी होती तो यह निश्चय है कि अब तक बिलवासी जी को वे अपनी आंखों से खा चुके होते। वे कुछ नहीं समझ पाते थे कि बिलवासी जी को इस समय हो क्या गया है।

साहब ने बिलवासी जी से पूछा— 'तो अब क्या करना चाहिए?'

पुलिस में इस मामले की रिपोर्ट कर दीजिये जिससे इस आदमी

को फौरन हिरासत म ले लिया जाय।'

'पुलिस-स्टेशन है कहा ?

चलिये।'

"अभी चलो। आपकी इजाजत हो तो पहल मैं इस लोटे को इस आदमी से खरीद लू। 'क्यो जी बेचोगे ? मैं पचास रुपय तक इसक दाम दे सकता हूँ।

लाला झाऊलाल तो चुप रहे पर साहब ने पूछा— इस रद्दी लोटे का आप पचास रुपये दाम क्यो दे रहे हैं ?'

आप इस लोटे को रद्दी जानते हैं ? आश्चर्य ! मैं तो आपको एक विज्ञ और सुशिक्षित आदमी समझता था।

आखिर बात क्या है कुछ बताइये भी ?

'यह जनाब ! एक ऐतिहासिक लोटा जान पड़ता है। जान क्या पड़ता है मुझे पूरा विश्वास है। यह वह प्रसिद्ध अकबरी लोटा है जिसकी तलाश म ससार भर क म्यूजियम परेशान हैं।

यह बात !

'जी हां जनाब ! सोलहवी शता॰ी की बात है। बादशाह हुमायू शेरशाह से हार कर भागा था और सिन्ध के रेगिस्तान मे मारा मारा फिर रहा था। एक अवसर पर प्यास स उसकी जान निकल रही थी। उस समय एक ब्राह्मण ने इसी लोटे से पानी पिलाकर उसकी जान बचाई थी। हुमायू के बाद जब अकबर दिल्लीश्वर हुआ तब उसने उस ब्राह्मण का पता लगा कर उससे उस लोटे को ले लिया और इसके बदले म उसे इसी प्रकार के दस सोने के लोट प्रदान किये। यह लोटा सम्राट अकबर को बहुत प्यारा था। इसी से इसका नाम अकबरी लाटा पडा। वह बराबर इसी स वजु करता था। सन् ५७ तक इसके शाही घरान म ही रहने का पता है।

पर इसके बाद यह लापता हो गया। कलकत्ते के म्यूजियम म इसका प्लास्टर का माडल रखा हुआ है। पता नहीं यह लाटा इस आदमी के पास कैसे आया। म्यूजियम वाला को पता चले तो फाँसी दाम देकर खरीद ले जाय।

इस विवरण को सुनते-सुनते साहब की आँखा पर लोभ और आश्चय का ऐसा प्रभाव पडा कि वे कौड़ी के आकार से बढकर पकौडी क हो गय। उसने बिलवासी जी से पूछा— तो आप इस लोटे को लेकर क्या करिएगा ?'

'मुझे पुरानी और एतिहासिक चीजो के सग्रह करने का शौक है।''

'मुझे भी पुरानी और ऐतिहासिक चीजों के सग्रह करन का शौक है। जिस समय यह लोटा मर ऊपर गिरा उस समय मैं यही कर रहा था। उस दुकान पर से पीतल की कुछ पुरानी मूर्तिया खरीद रहा था।

'जो कुछ हो लाटा मैं ही खरीदू गा।''

'वाह आप कसे खरीदेग ? मैं खरीदू गा। मेरा हक है।

''हक है ?'

जरूर हक है। यह बतलाइये कि उस लोटे के पानी से आपने स्नान किया या मैंने ?

'आपने।''

वह आपके पैरो पर गिरा या मेरे ?

आपक।

अगूठा उसने आपका भुरता किया या मेरा ?''

आपका।'

इसलिये उसको खरीदने का हक मेरा है।

यह सब झोल है। दाम लगाइये, जो अधिक दे वह ले जाय।

"यही सही। आप उसका पचास रुपय सगा रहे थे मैं सौ देता हूँ।'

'मैं डेढ़ सौ देता हूँ।'

'मैं दो सौ देता हूँ।

'अजी मैं ढाई सौ देता हूँ'—यह कहकर विलवासा जी ने ढाई सौ के नोट लाला भाऊलाल के आगे कर दिये।

साहब को भी अब ताव आ गया। उसने कहा—"आप ढाई सौ देते हैं तो मैं पाँच सौ देता हूँ। अब चलिये?'

विलवासा जी अपमान के साथ अपने रुपये उठाने लगे मानो अपनी आशाओं की लाश उठा रहे हैं। साहब की ओर देखकर उन्होंने कहा— लोटा आपका हुआ न जाने मेरे पास ढाई सौ से अधिक हैं नहीं।

यह सुनना था कि साहब के चेहरे पर प्रसन्नता की कूची फिर गयी। उसने झपट कर लोटा उठा लिया और बोला—'अब मैं हँसता हुआ अपने देश लौटूँगा। मेजर डगलस की डींग सुनते सुनते मेरे कान पक गये हैं।'

मेजर डगलस कौन है?

'मेजर डगलस मेरे पड़ोसी है। पुरानी चीजों का संग्रह करने में मेरा उसकी दौड़ रहती है। गत वर्ष वे हिन्दुस्तान आये थे और यहाँ से जहाँगीरी अण्डा ले गये थे।

जहाँगीरी अण्डा!' जहाँगीरी अण्डा!! मेजर डगलस ने समझ रक्खा था कि हिन्दुस्तान से वे ही अच्छी चीज ले जा सकते हैं।

'पर जहाँगीरी अण्डा है क्या?

'आप जानते है कि एक कबूतर ने नूरजहाँ से जहाँगीर का प्रेम कराया था। जहाँगीर के पूछने पर कि मेरा एक कबूतर तुमने कैसे उड़

जान दिया नूरजहां ने उसके दूसरे कबूतर को भी उडाकर बताया था कि ऐसे। उसकी इस भोलेपन पर जहांगीर सौ जान से निछावर हो गया उसी क्षण से उसने अपने को नूरजहां के हाथों बेच कर दिया। कबूतर का स्नेह मान वह नहीं भूला। उसने एक अण्डे को बडे जतन से रख छोडा—एक बिल्लौर की हांडी में। वह उसके सामने टंगा रहता था। बाद में वही अण्डा 'जहांगीरी अण्डा' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसी को मेजर डगलस ने पार साल दिल्ली में एक मुसलमान सज्जन से तीन सौ रुपये में खरीदा।'

यह बात !

हां पर अब वे मेरे आगे दून की नहीं ले सकते। मेरा अकबरी लोटा उनके जहांगीरी अण्डे से भी एक पुश्त पुराना है।"

'इस रिश्ते से तो आपका लोटा उस अण्डे का बाप हुआ। साहब ने लाला झाऊलाल को पांच सौ रुपये देकर अपनी राह ली। लाला झाऊलाल का चेहरा इस समय देखते बनता था। जान पडता था कि मुंह पर छः दिन की बढ़ी हुई दाढ़ी के एक एक बाल मारे प्रसन्नता के लहरा रहे हैं। उन्होंने पूछा—' बिलवासी जी ! आप मेरे लिये ढाई-सौ रुपया घर से लेकर चले थे ? पर आपके पास तो थे नहीं।

इस भेद को मेरे सिवाय मेरा ईश्वर भी जानता है। आप उसी से पूछ लीजिये। मैं नहीं बताऊंगा।'

पर आप चले क्यों ? अभी मुझे आपसे काम है दो घण्टे तक।

'दो घण्टे तक !'

हां और क्या ! अभी मैं आपकी पीठ ठोककर शाबाशी दूंगा। एक घण्टा इसमें लगेगा फिर गले लगाकर धन्यवाद दूंगा एक घण्टा इसमें भी लग जायगा।'

'अच्छा पहले अपने पांच सौ रुपये गिनकर सहेज लीजिये।

गाया अगर आता गे तो उस गद्गदना तक मा गुन्त और सम्मोहक काय है कि मनुष्य उस समय गन्ज में ही तन्मयता प्राप्त कर लेता है। लाला भाऊलाल ने अपना काय समाप्त करके ऊपर देखा। पर विमवासी जी इस बीच अन्तर्धान हो गए थ।

वे लम्बे डग मारते हुए गली म चले जा रहे थ। उस रात्रि विमवासी जी को देर तक नीद नही आई। व चादर लपेट चारपाई पर पड रहे। एक बजे व उठे। धीरे धीरे और बहुत धीरे से अपना गाई हुई पत्नी के गले से उन्होने सोने की वह सिकडी निकाली जिसमे एक ताली बंधी रहती था। फिर उसके कमरे म जाकर उन्होने उस ताली से सन्दूक खोला। उसमे टाई सौ के नोट ज्यो के त्यो रखकर उन्होने उसे बन्द कर दिया। फिर दबे पाव लौटकर ताली को उन्होने पूर्ववत अपनी पत्नी के गले म डाल दिया। इसके बाद उन्होने हस कर अगडाई ली अगडाई लेकर लेट रहे और लेट कर मर गये।

दूसरे दिन सुबह आठ बजे तक व मरे रहे।

○

झूरी काका

○

'मोहिंजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में जितनी वस्तुयें निकली हैं उन सब में यदि आप झूरी काका को मिला दें तो शायद ही कोई पुरातत्त्ववेत्ता उन्हें पहचान पावे। विधाता की इस बीसवीं शताब्दी की कलाकृति को देखते ही ऐसा लगता है जैसे वह तीन सौ ई० पू० की रचना हो। न झूरी काका के ग्राम का पता है न नाम का। झूरी नाम कब और कैसे पड़ा किसी को ज्ञात नहीं। नाम झूरी अवश्य है पर शरीर ऐसा नहीं। पिछले महीने तौल गये तो पसठ सेर वजन निकला। बकौल सेठ जी (जो मारवाड़ी नहीं सिन्धी हैं)—के संसार में दो ही वस्तुयें स्थिर यौवना हैं एक तो सदाबहार के पेड़ दूसरे झूरी काका। यक्षों और किन्नरों को भी स्थिर यौवन कहा जाता है पर उनका अस्तित्व ही अब नहीं रह गया। अतः उनकी चर्चा व्यर्थ है। सब कुछ होते हुए भी झूरी काका का अफसोस है कि इस नर नारी से भरे जगत् में वह अकेले हैं। अर्थात् संसार की किसी प्रकार की किसी लड़की ने उन्हें अपना जीवन साथी नहीं बनाया। पचासों पार कर जाने के बाद भी झूरी काका को विवाह की लालसा बनी है। प्रत्येक वर्ष गर्मी आती है। गर्मी में लगनें पड़ती हैं। शादी विवाह होते हैं। शहनाइयां बजती हैं। डोलियां सजती हैं पर झूरी काका के हाथ में हल्दी नहीं लग पाती। इसका जितना अफसोस झूरी काका को

है उससे कम हम लोगों को नहीं । पर क्या करें विवशता है ।

भूरी काका मुझे बहुत चाहते हैं । क्योंकि उन्हें विश्वास है कि यदि मैं चाहूं तो एक न एक दिन उनके आंगन में चूड़ियां खनखना उठें । इसी चाह के खेत में उनकी आशायें आज दस वर्ष से पनप रही हैं । मैं भी उनकी आशाओं को मरने नहीं देता । क्योंकि ऐसा करने पर बाबू जी जो अब एक बड़े अधिकारी हैं भूखों मर जायेंगे । भूरी काका आज पंद्रह वर्ष से उन्हीं के यहां नौकर हैं बर्तन साफ करते हैं झाड़ू लगाते हैं और कभी कभी अकड़ भी जाते हैं । उन्हें कोई नौकर नहीं कहता । वे अपने को नौकर समझते भी नहीं । कोई कह दे तो उसे अस्पताल जाना पड़े । जिसमें मदन युद्ध का पौरुष हो यह जहमत वही मोल ले सकता है । अतः सब उन्हें काका ही कहते हैं । काका कहने पर वह प्रसन्न रहते हैं । खूब हंसते गाते हैं । काका न कहने पर एक धोबी को पीट चुके हैं । तब से बड़े-बूढ़े सब उन्हें काका ही कहते हैं । सच बात तो यह है कि उन्हें काका न कहो तो खाना ही हजम न हो । पहले वह घर वालों के काका रहे फिर मुहल्ले वालों के अब पूरे नगर के हैं । यही स्थिति रही तो एक दिन सम्पूर्ण देश के काका हो जायेंगे । इसमें सन्देह नहीं । ठीक उसी प्रकार जैसे नेहरू जी संसार के चाचा हैं ।

भूरी काका का मेरा परिचय जनवरी १९५२ में प्रथम बार हुआ । मैं बाबू जी के यहां ठहरा था । काका खाना बनाते थे । सब के साथ मुझे भी खिलाते । न बोलते न बातें करते । अधिकतर चुप रहते । कोई विशेष बात न थी । दो-तीन दिन बाद मैंने देखा भूरी काका में अकस्मात् परिवर्तन आ गया है । बड़े प्रेम से मुझे खाना खिलाते हैं । बिहंसते हैं । कभी-कभी पैर भी दबा देते हैं । कारण मेरी समझ में न आया । पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि बाबू जी ने एक फुलझड़ी छोड़ दी है कि मेरी जान-पहचान में एक लड़की है । मैं उसका विवाह भूरी काका से

करा सकता हूं। बस तभी से मेरी आव भगत होने लगी। मुझे पता लगा तो मैं विहंस कर रह गया। बात की रक्षा करनी थी। अतः मैंने भूरी काका को प्रकट में आश्वासन भी दे दिया। फिर क्या था। मेरी चौगुनी सेवा होने लगी। काका को पूरा विश्वास हो गया कि मेरे माध्यम से विवाह जरूर हो जायगा।

एक दिन की बात है। टोले मुहल्ले वालों का जमघट लगा था। भूरा काका भी बैठे थे। उनकी गंजी खोपड़ी पर उग दो चार रूखे बिखरे बाल हवा में लोट-पोट रहे थे। पीले गंदे दांतों के नीचे आज कम्पला सुरती नहीं पान का बीड़ा था। छोटी-छोटी चुंधी आंखों में मोटा काजल लगा था। कान के ऊपर अधजली बीड़ी थी। चेहरे पर न मुसकान न गंभीरता केवल खोखलापन था। समय उपयुक्त था। सब लोग काका को छेड़ कर आनन्द लेना चाहते थे। सेठ जी ने चुटकी ली—'अरे भाई काका का विवाह कब करा रहे हो?' उनके इस प्रश्न से सभी मेरी ओर देखने लगे। काका ने नव-परिणीता की तरह शीश झुका लिया। मैं थोड़ी देर तक चुप रहा। मुझे लगा काका का हृदय भीतर ही भीतर उमड़ रहा है। मैंने उनका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा—'काका मेरी जान-पहचान के एक ठाकुर साहब हैं। बेचारे बहुत गरीब हैं उनके एक २२,२३ साल की लड़की है। वह सयानी हो गई है। कोई लड़का मिल नहीं रहा। मिलता है तो उनके पास दहेज के लिये टका नहीं है। उन्हें एक सयाना लड़का चाहिये। जब तुम्हीं कुआरे हो तो इधर उधर भटकने की क्या जरूरत। तुमसे ज्यादा कुलीन तिलोकचंदी वर कहां मिलेगा। तुम्हारी उम्र क्या होगी?

मेरे प्रश्न करते ही काका ने विहंस कर शीश झुका लिया।

बताते क्यों नहीं सेठ जी ने कहा—'अब काहे की शरम।'

'२५-२६ साल।' काका ने लजाते हुये बहुत धीरे से उत्तर

फलदान की चर्चा कर दी। मेरा बाह प्रमाणस्वरूप सब को दिखाया। निमन्त्रण दिया। निश्चित दिन एक अच्छा मजमा इकट्ठा हो गया। कुछ याच-नितों का कुछ तमाशबीनों का। बाबा का उल्लास देखते ही बनता था। आज उन्होंने अपनी बाल कटाये थे। गंजी खोपड़ी में तेल लगाया था। कपड़े साफ किये थे। मजमा देख कर सेठ जी बोले— इतनी भीड़ तो करपा-तरी (करपात्री) महाराज के भाषण में भी नहीं हुई। क्या बात है बाबा?

फलदान है फलदान बाबा ने कहा— '११ बजे रात की गाड़ी से सब लोग आ रहे हैं।

वाह बहुत अच्छा सेठ जी ने कहा— रिक्शा भेज दें।

नहीं नहीं बाबू जी ने कहा— आप खुद चले जाइये। स्वागत कौन करेगा।

सेठ जी चल पड़े। ग्यारह बजे रात तक चहल पहल रही। लगभग बारह बजे जब सेठ जी लौटे तो उन्होंने बताया— गाड़ी में कोई नहीं आया। इतना सुनते ही बाबा का चेहरा सूख गया। सेठ जी ने कुछ रुक कर कहा— मैंने गाड़ी वालों से पूछा तो उन्होंने बताया कि फलदान वाले आये थे मगर ऊंचाहार में सो गये। गाड़ी की बत्ती नहीं कर सके। अतः रायबरेली आने के बजाय इलाहाबाद चले गये।'

इस समाचार से बाबा की दशा एटम बम से ध्वस्त हिरोशिमा जैसी हो गयी। निराश होकर बोले— रात में ऐसा ही होता है। सो न जाते तो धोखा न होता। अब क्या किया जाय?

करना क्या है सेठ जी ने कहा— शास्त्री के वचन भी तो फलदान चलता है कहां चल जायगा।

बात बाबा की समझ में आ गई। रूखा चेहरा थोड़ा सा खिल उठा। महफिल खत्म हुई। एक सप्ताह बाद मैं रग ढग लेने स्वयं आ पहुंचा।

मरे प्रात ही यार लोगा ने यह अफवाह फैला दी कि इस वप नादी नही हागी। लडकी क महरानी (चेचक) निकल आई है। मैं यही सदेश लेकर आया हू। काका मन ममोस कर रह गय। अकेले मे चुपके से बोले —'तो अब मान भर फिर इतजार करू।

हा काका मैंने कहा 'कोई बडी बात नहीं। तब तक तुम कुछ रुपया भी इकट्ठा कर लो जिसमे किसी के सामने हाथ न फैलाना पडे। बात काका की समझ म आ गयी। दूसरे दिन काका बिना बताये ही चुपके स गाव चल गय। वहा गल्ला बेचा। बडे भाइ तथा भाभी स झगडा किया। दो सौ रुपय लेकर शहर आय। बाबू जी की सलाह से वह रुपया डाकखाने में जमा कर दिया गया। धीरे धीरे साल भर बीत गया। काका अब पक्का कुली हो गय थ। दिन भर पखा खीचते। सुबह शाम बाबू जी के यहा काम करते। साल पर साल बीतने लगे। पर काका की शादी न हुई। कभी लडकी के चेचक निकल आती। कभी उसका बाप मर जाता। कभी मा बीमार हो जाती। काका सुनते। सब क स्वस्थ होने की कामना करते। मान मनौती करते। परसाद बाटते। उन्हे पूर्ण विश्वास था कि उनका विवाह होगा। काका रगीन सपने सजाते रहे। कहीं शहनाई बजती तो उनका दिल धडक उठता। डोली देखते तो खडे देखते ही रह जाते। बैड की धुन पर स्वय ताल लगाने लगते। धीरे धीरे दस साल बीत गय। न काका का विवाह हुआ न मेरी आव भगत में कमी हुई।

इस वप टाइप किया एक निमत्रण पत्र मिला। पत्र पढते ही मैं आश्चयचकित रह गया। लिखा था— काका के विवाह क उपलक्ष में प्रीति भोज है अत दि० १० २ ६३ को चन्द्रभवन में ठीक ५ बजे साय काल उपस्थित होकर कृताथ करें। दशनाभिलाषी—एस०एन० मठ। पत्र पढ़ते हा मेरा माथा ठनका। पर प्रसन्नता हुई काका के हाथ पील हो गय। उन्हे बहू मिल गई। ठीक पाँच बजे चन्द्रभवन पहुचा। वहा मजो

रजाई मेजो पर मिठाई नमकीन फल वगैरह का ढेर लगा था। चाय का दौर चल रहा था। यार लोग रसगुल्ला छान रहे थे। काका पियरी पहने विराजमान थे। मैंने काका को बधाई दी। काका बीच में हो गया था कि काका का जोड़ा मिल गया है। मुझे पूरा विश्वास बाबू जी से पूछा—कहाँ शादी हुई ? यह विद्रम उठे। बोले— इसी सेठ जी से पूछो। मैं सेठ जी की ओर मुखातिब हुआ। पार्टी समाप्त होने पर मैंने शादी कैसा विवाह। यह नाटक था नाटक। सेठ जी बोले कैसी लाय। क्या जिन्दगी भर चलाओगे। दस साल तक तो चला

'नाटक। —मैंने आश्चर्य से पूछा।

जी हाँ सेठ जी बोले— यार तुम भी साठ साल तक चुगद ही रहोगे। अरे गज्जू भाड को जानते हो न। उसी का लड़का भूरी की बहू है। यह लड़का जनाना पाट बहुत अच्छा करता है। प्रतापगढ़ एक बारात गई थी। वह भी वही था। उसी को जनाने कपड़े पहना कर काका के साथ गठबंधन करा दिया गया। उसी की आज दावत है। अगहन में गौना होगा तब लड़की आवेगी। काका ने दो सौ रुपया जमा कर रक्खा था। सौ रुपये लड़की के गहने-कपड़ो और नेगचार में खर्च हो गये। बाकी की पार्टी उड़ रही है।

मैंने भूरी काका की ओर निहारा। वह अत्यधिक प्रसन्न थे। मैंने सेठ जी से कहा— बेचारे ने जीवन भर विवाह की प्रतीक्षा की अब मरघट तक गौने की करे। काका ने घूर कर मेरी ओर निहारा। मैंने पूछा —काका गौना कब आ रहा है ?

अगहन सुदी तेरस को —काका ने साइत बिचरवा ली थी।

'वाह। मैंने कहा— बहुत अच्छा। विवाह में नहीं बुलाया तो गौने में मुझे जरूर बुलाना।

काका ने स्वीकृतिसूचक शीश हिला दिया। सब लोग मुस्कुरा उठे। काका तिरछी निगाह से देखते हुये भीतर चल गये मानो सुहागरात मनाने जा रहे हों।

○

समारंभ की प्रतिष्ठा



इस कालेज की साहित्य समिति के उद्घाटन के लिये एक मन्त्री का आगमन उस जिले के लिये बड़ी महत्त्वपूर्ण घटना थी। कालेज के इतिहास में तो वह अपूर्व अवसर था ही। विद्यार्थियों ने कभी नहीं सोचा था कि उनके समारंभ को एकदम इतनी प्रतिष्ठा मिल जायगी।

क्योंकि ज्यों ही पता चला कि स्वयं मिनिस्टर महोदय पधारने वाले हैं तभी से डिप्टी कमिश्नर और पुलिस कप्तान साहब के दो एक चक्कर कालेज के लग गये—यह देखने के लिये कि इन्तजाम में तो किसी प्रकार की गड़बड़ी नहीं है।

उक्त कालेज की स्थापना तीन वर्ष पहले हुई थी। और उसकी हिन्दी साहित्य समिति का उद्घाटन आज वसंत पंचमी के शुभ अवसर पर होने जा रहा था। कालेज के प्रिंसिपल महोदय ने दो एक साहित्यिकों को उद्घाटन के लिये निमंत्रित करने की कोशिश की पर जाने कैसे डिप्टी कमिश्नर साहब ने मामले में थोड़ी दिलचस्पी ले ली और मन्त्री महोदय का आगमन निश्चित हो गया।

प्रिंसिपल महोदय ने कहा अंधा एक आंख मांगता था भगवान ने दो दे दीं। इस निमित्त नगर के धानी मानी सेठ साहूकार ला कालेज

में आवेंगे ही और उनसे चन्दा बगैर कहे का माग प्रशस्त हो जायगा। पर जो खास बात थी वह यह कि मन्त्री महोदय के आने से सरकार से खासी ग्राण्ट मिलने में मदद होगी। जिले के डिप्टी कमिश्नर बड़े घुटे आदमी थे। अपनी पच्चीस वर्ष की नौकरी में कई सरकारें और मन्त्रि मण्डल देख चुके थे। और आज के राष्ट्रीय जमाने में भी उन्हीं का सिक्का चलता था। मुश्किल से मुश्किल परिस्थिति को हल निकालना उनके बायें हाथ का खेल था। अचरज की बात नहीं कि डिप्टी कमिश्नर साहब मौजूदा मुख्य मन्त्री के भी बड़े विश्वासपात्र थे।

उन्हीं महाशय के प्रयत्नों का फल था कि कालेज के समारोह के लिये मन्त्री महोदय उपलब्ध हुये। प्रिंसिपल साहब उनके उपकारों के भार के नीचे दब गये।

पर जिलाधीश साहब का उद्देश्य कुछ और था। बात असल में यह थी कि बसन्त पंचमी के दूसरे ही दिन नगर का म्युनिसिपल चुनाव था। शासकीय-दल और विरोधी दल तुल्य बल थे। मुख्य मन्त्री से लेकर डिप्टी कमिश्नर साहब तक सभी चाहते थे कि शासकीय दल की ही जीत हो। मुख्य मन्त्री का यह आग्रह स्वाभाविक था। पर डिप्टी कमिश्नर साहब को उनसे भी अधिक चिन्ता थी। यदि शासकीय दल हार गया तो उन पर भी यह आरोप आता कि इनमें टक्ट (कार्यकुशलता) नहीं है जो एक सुयोग्य अधिकारी में होनी चाहिये। वह जीत जाय तो उनका सितारा भी मुख्य मन्त्री के दरबार में अधिक चमक जाय। इसलिये इस चुनाव में वे इस तरह दिलचस्पी ले रहे थे मानो वे स्वयं ही एक उम्मीदवार हों।

लेकिन सामना बराबरी का था। इसलिये मत गणना के ठीक एक दिन पहिले ऐसा कुछ जरूरी था जिससे पलड़ा सरकारी दल की तरफ ही झुक जाय। उस नगर में एक विशिष्ट जाति के पास ठोस दो हजार वोट थे। वह जाति जिस ओर झुक जाय वही चुनाव जीतेगा।

सौभाग्य से मंत्रि मण्डल में उस जाति के एक मंत्री विद्यमान थे। डिप्टी कमिश्नर का दिमाग और मुख्य मंत्री की असाधारण सूझ-बूझ के कारण यही फैसला हुआ कि उक्त मंत्री महोदय का नगर में पधारना ही कुरुक्षेत्र में भगवान श्रीकृष्ण के आगमन जैसा हो जायगा। लिहाजा वे ही इसके लिए तैनात हुए।

सौभाग्य से उक्त कालेज की हिन्दी साहित्य समिति के उद्घाटन का आयोजन हो रहा था। ज्यो ही डिप्टी कमिश्नर साहब के कानों में इसकी भनक पड़ी फौरन उन्होंने ऐसा सुन्दर चक्रव्यूह रच डाला कि समारंभ का बन्दोबस्त लाजवाब ! क्या कहने हैं ?

महाभारत का उन्होंने केवल अपने मतलब का हिस्सा ही पढ़ा था। उनका चुनाव युद्ध धर्म युद्ध है या नहीं यह सोचने विचारने की न तो उन्हें फुरसत ही थी न जरूरत। उनका हाल उसी अभियुक्त की तरह था जिसे दूसरे की औरत भगाने के मामले में तीन साल की सजा हुई थी। जब अदालत ने पूछा कि तूने यह गुनाह क्यों किया तो कम्बख्त बोला कि यह बात मैंने रामायण से सीखी।

जज साहब उसकी हिमाकत देख कर दंग रह गये। पूछा—कैसे ? तो अभियुक्त ने जवाब दिया कि—'रावण ने राम की पत्नी सीता को भगाया उसी पर से।'

'पर उसके कारण रावण का वध हुआ यह तू जानता है ?'—जज साहब ने पूछा।

नहीं साहब वहां तक मैं रामायण पढ़ नहीं पाया कि बीच में गिरफ्तार कर लिया गया।

'अच्छा तो अब तुम जेल में जाकर बाकी की रामायण पढ़ना।'—ऐसा कहकर अभियुक्त महाशय सरकारी मेहमानी के लिये जेल

क्योंकि सिर्फ दो दिन पहले ही ट्रक टेलीफोन पर यह कार्यक्रम तय हुआ था। साहित्य समारोह के लिये बसन्त पंचमी से बढ़कर कोई शुभ मुहूर्त नहीं है। और खासकर यदि चुनाव की तारीख नहीं टल सकती है तो उत्तम मंगल मुहूर्त की अवहेलना करना घोर असाहित्यिकता होगी। सो वही मुहूर्त बहाल रहा, और पी० ए० साहब को भाषण लिखने लिखाने में बड़ी भाग दौड़ करनी पड़ी।

खैर किसी तरह मंत्री महोदय अपने दल-बल सहित राजधानी से रवाना होकर रात को ग्यारह बजे के करीब उस जिले के मुकाम पर पहुंचे। करीब डेढ़ सौ मील का मोटर का सफर हुआ। कुछ थकावट आ गयी। दूसरे दिन सुबह आठ बजे ही समारंभ था इसलिये वे जल्दी सोने के लिये चले गये।

इधर पी०ए० साहब ने दूसरे दिन के विविध कार्यक्रमों के कागजात जमाने शुरु किये तो देखा कि जल्दी में भाषण की फाइल ही घर भूल आये। हाय तौबा! अब क्या होगा? आध पौन घंटा तो साथ के सभी कागजों और सन्दूकों की छानबीन में ही बीत गया कि कहीं गलती से वह फाइल दबी हो तो मिल जाय। जब यह भरोसा हो गया कि फाइल साथ नहीं आयी है मेज पर ही रह गयी है तब घड़ी ने टन से बारह बजाये।

अब इस मध्य रात्रि में क्या होगा? वापिस डेढ़ सौ मील मोटर भेजकर पाण्डुलिपि मंगाने में तो बड़ी दिक्कत होगी। मुमकिन है समय पर आ भी न सके। मन्त्री महोदय तो लिखित भाषण ही किसी कदर देते हैं स्वयं-स्फूर्ति से दिये गये भाषण यदि टल सके तो टालना चाहिये। ऐसी हालत में क्या किया जाय?

पी० ए० साहब ने फौरन डी० सी० साहब की शरण ली। उन्हें नींद से जगाया। उन्हें कुछ झुंझलाहट तो हुई पर उस समय उससे क्या काम बनता? आखिर इस संकट में से कोई न कोई रास्ता तो निकालना

ही हागा । व अनुभवी शासनाधिकारी थे —हार मानना उनके लिये असभव था।

उन्होंने फौरन कहा कि चलो स्थानीय हाई स्कूल म हिन्दी के एक आचाय पढ़ाते हैं उन्हीं स तुरन्त भाषण लिखा लिया जाय। यू पी० ए० साहब के दिमाग म यह बात उठी कि व खुद ही इसे क्या न लिख डाल ? पर साहित्य का विषय था सकोच कर गय। आखिर उसे प्रेस म भी तो छपाना था। और कोई विषय होना तो जरूर लिख डालत।

साढ़े बारह बजे के करीब पण्डित विश्वनाथ जी शास्त्री का दरवाजा खटखटाया गया। उन्होंने आख मलते मलते ही दरवाजा खोला तो देखा—कि एक म त्री महोदय की सरकारी चमाचमाती हुई मोटर खडी है और दरवाज पर डिप्टी कमिश्नर साहब पुलिस के एक डिप्टी साहब तथा एक अपरिचित व्यक्ति खडे हैं।

शास्त्री जी पहले तो बहुत घबडाय। शनि मगल और राहु की गति के कारण यह कौन सा अनर्थ उपस्थित हो गया यह सोच कर उनकी नाड़ी ना क्या होश हवास ही उडने लगे।

पर जब डिप्टी कमिश्नर साहब न मृदु शब्दों म अपना मन्तव्य सुनाया और उनम रात ही रात एक साहित्यिक भाषण लिखने का आग्रह किया तो उनकी बाछे खिल गयी। उन्होंने अपनी लम्बी चुटिया खोलकर फिर एक बार बाध ली और बोल— अवश्य। राज्य-द्वार की अनुज्ञा का पालन करना प्रत्येक मानव प्राणी का परमोच्च कर्त्तव्य है ऐसा शास्त्र वचन है।

डिप्टी कमिश्नर साहब को यह सब शास्त्राथ सुनने का समय न था। वापिस डिप्टी कमिश्नर कि भाषण कर होने म साढ़े सात बजे सुबह तक तयार हो जाना चाहिये व चल गय।

साहित्याचाय पण्डित विश्वनाथ शास्त्री के आनन्द और अभिमान

का पारावार नही । फौरन अपने शयन कक्ष मे गये और अपनी जगी हुई धर्मपत्नी को और भी झकझोर कर जगाते हुए बोले—'देखती हो कैसा राज योग आया है ? मैंने तुमसे पहले ही कहा था शनि राहु पराक्रम मे अर्थात तीसरे स्थान मे बैठे हैं, और गुरु एकादश है अर्थात लाभ स्थान मे है, वह टल नही सकता—ऐसा ही मैंने दृढतापूर्वक कहा था न ? तो लो देखो, आज घर बैठे नींद से जगाकर राज योग आ पडा न ?'

आचार्य पत्नी आखें फाडकर और मुह बाकर भाग्य के इस अद्भुत उन्मेष को देखती रही । इन ग्रह योगो का मर्म अपनी धर्मपत्नी को समझाने की क्रिया मे पण्डित जी का भाषण लेखनप्रारम्भ करने मे आध पौन घण्टे की देर हो गयी ।

इधर सात बजे सुबह से ही साहित्याचार्य पण्डितजी के दरवाजे पर एक मोटर खडी थी जिसमे एक सिपाही बैठा था । मुहल्ले वाले इस अनहोनी घटना को दाता तले अगुली दबाकर आश्चर्यचकित हो देखते थे । दो एक बडे-बूढो ने कहा भी कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही यह शुभ घडी आयी कि राज-दरबार मे साहित्यिकों का सम्मान होने लगा है। आचार्य जी की पत्नी इन बातो से बडी प्रभावित थी पर स्वय आचार्य जी को इस समय अपने भाषण-लेखन को छोडकर और कुछ नही सूझता था । उनके चारो तरफ पाणिनी कात्यायन पिंगल वाल्मिकी आदि के ग्रन्थ खुले पडे थे और वे स्वय रजाई ओढकर एक सन्दूक का टेबल जैसा उपयोग करके अपनी रचना करते जा रहे थे । उनके घर मे घडी तो नही थी पास ही घण्टाघर था । उसी से काम चला लिया करते थे । सिर्फ इसमे एक छोटी सी गलती हो गयी कि जब घण्टाघर मे सात के घण्टे बजे तब आचार्य जी ने छ ही गिने ।

इधर आठ बज गये और कालेज के विशाल प्रांगण मे श्रोता समुदाय उमड उठा । चारो तरफ झण्डियां बन्दनवार और आम के पत्तों के

तारण सग थ । डिप्टी कमिश्नर की आयोजन कुशलता यत्र-तत्र दिखाई देती थी । नगर क प्राय सभी सरकारी कमचारी तथा उनकी पत्नियाँ समारभ म उपस्थित थी । मन्त्रिजी की मन्त्री महोदय क सामने ही पहली चार पांच कतारो म बिठाया गया था । प्रमाण की गामा बढ़ाने का दृष्टि स किसी बात की कसर नही रखनी था । बस इसी भाषण क सामने म कोई गड़बड़ न हो जाय इसी की चिन्ता थी ।

ठीक आठ बज मच पर मन्त्री महोदय कालेज क प्रिन्सिपल डिप्टी कमिश्नर पुलिस कप्तान तथा साहित्य समिति क अध्यक्ष । मन्त्री और उन मन्त्री बठ गय । जिलाधीश की कुर्सी क पीछे ही पी० ए० साहब विराजमान थ और उनके पीछे दो एक चपरासी पुलिस दारोगा आदि सरकारी कमचारी थ ताकि वक्त-जरूरत पर उन्ह दौड़ धूप क लिय भजा जा सक । कहने को तो समारोह का सभापति एक विद्यार्थी था, पर सारा सचालन डिप्टी कमिश्नर साहब क इशारो पर यन्त्रवत हो रहा था ।

इधर स्वागत-गीत प्रारभ हुआ और उधर जिलाधीश न एक दारोगा को आचाय जी क पास भेजा कि भाषण तथा उसक रचयिता जिस भी स्थिति म हो उन्ह मोटर म बठाल कर ले आओ । व्यास पीठ पर साहित्याचाय जी के लिये भी एक कुर्सी रख दी गयी थी । आध घण्टे म वह मोटर आया तब तक रिपोट आदि पढ़ी जा रही थी । भाषण का टाइप कराना आवश्यक था पर सभव नही हो सका । फिर भी मन्त्री जी ने अपने पी० ए० से कहा कि मैं परिस्थिति सम्हाल लूगा ।

जब मन्त्री जी भाषण देने क लिए खड़े हुए तो डिप्टी कमिश्नर साहब के इशारे पर सभा मण्डप म चारो तरफ तालियो की ऐसी करतल ध्वनि कि मन्त्री महोदय का दिल खुशी स फूल उठा और उनका उत्साह बढ़ा एव उन्होने भाषण देना शुरू किया—

× × ×

देवियो और सज्जनो !

तालियों की ध्वनि अब भी उनके कानों में गूंज रही थी और उसी के नशे में वे झूम झूमकर बोले—

× × ×

सज्जनो और देवियो !

लिखित भाषण पढ़ने का उन्हें भान नहीं रहा और उनके मुखारविन्द में साहित्योद्यान का सौन्दर्य द्विगुणित करने वाले प्रसून झड़ने लगे। उनके हितचिंतकों की तरफ से उन्हें एक हिदायत यह दी गयी थी कि जिस समाज में भाषण करने जाना हो उसकी जम कर तारीफ कर दिया करो। बस, श्रोतृ-समुदाय आनन्द और अभिमान से फूल कर कुप्पा हो जायगा और उसे व्याख्याता के मुंह की तरफ देखने का ध्यान ही नहीं रहेगा। हिन्दी भाषियों की सभा हो तो कह दो कि उसी का साहित्य श्रेष्ठ है। बंगला भाषियों की सभा हो तो कहो वह विश्व में सबसे अग्रणी है। मराठी भाषी हो तो कहो दुनिया में उसका मुकाबला कोई साहित्य नहीं कर सकता। ब्राह्मण हो तो कहो उनके बिना समाज का रथ नहीं चल सकता। हरिजन समाज में भाषण देना हो तो कहो सारा शासन सूत्र उनके हाथ में लिये बगैर देश का कल्याण नहीं होगा। महिलाओं की सभा हो तो कह दो कि दुनिया के राष्ट्र अपनी शासन व्यवस्था उनके हाथ सौंप दें तो मिनटों में युद्ध बन्द हो जाय और विश्व शान्ति स्थाई रूप से स्थापित हो जाय।

इसी धुन में उन्होंने आज का भाषण शुरू किया। हिन्दी ! अहा हा ! हिन्दी का साहित्य दुनिया के सभी साहित्यों से श्रेष्ठ है। फिर वह देश इंगलैण्ड हो या अमरिका हो या अफ्रीका हो। और इस तरह बचपन में भूगोल में पढ़े जितने देश उन्हें याद थे उनकी गणना की जिसमें पांच मिनट निकल गये।

'और हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास ! क्या उनकी रामायण है क्या क्या है क्या आनन्द है कैसी सुन्दर ब्रज भाषा है ? अहा हा !

लोगों ने तालियां बजाई पर थपथपाय । मन्त्री महोदय को लगा कि दर असल ऊंचे दर्जे का भाषण है लोगों को पसन्द आ रहा है । इसी ताव में बोले—

तुलसीदास जी को पटककर दुनिया के कितने साहित्यिकों ने प्रेरणा नहीं ली ? यहां तक कि स्वयं वाल्मीकि ऋषि को भी उसी का आधार लेना पड़ा ।

फिर तालियां और तालियों पर तालियां । वाकई ऐसा लगा था कि लोगों को भाषण बहुत ही अच्छा लग रहा था । डिप्टी कमिश्नर न जाने क्यों अपनी कुर्सी में ही इधर उधर भटक रहे थे । सामने देखा तो मन्त्री महोदय इस पतरे से खड़े थे कि जब भाषण इतना पसन्द किया जा रहा है तो कम से कम घण्टा भर बोल बगैर नहीं रहेंगे ।

अकस्मात् डिप्टी कमिश्नर का ध्यान श्रोताओं की ओर गया तो देखा कि म्युनिसिपल चुनाव में विरोधी दल के दस-बीस अक्खड़ लोग भी कुर्सी की दो कतार रोक कर बैठे हैं । भाषण का असली स्वागत तो उसी दल की ओर से हो रहा था ।

तालियों के हो हल्ले में उनके निज सहायक तथा मन्त्री महोदय की आपस में कुछ कानाफूसी हुई । फौरन एक गिलास पानी मंगवाया गया जिसे पीकर मन्त्री महोदय ने कहा—

इस प्रकार मैं आपके सामने घंटों तक बोल सकता हूं । पर मैं चाहता हूं कि आप साहित्य के बारे में मेरे गंभीर विचार सुनें । वे मैं आपके सामने रखता हूं ।

और उन्होंने आचार्य पं० विश्वनाथ जी शास्त्री के हस्त लिखित

भाषण को पढ़ना शुरू किया। पर पण्डित जी का नाम कितना भी अगाध क्यो न हो अक्षर इतने कलापूर्ण और कसीदेदार थे कि दो वाक्य भी ठीक से पढ़ना मुश्किल हो गया था। माननीय व्याख्याता जी अटक अटक जाते थे और लोग फिर ताली बजाने लगते थे। इसी हो हल्ले में फिर एक एक बार कानाफूसी हुई और प्रिंसिपल साहब ने घोषणा की कि मन्त्री महोदय का स्वास्थ्य कुछ कमजोर है इसलिये उनका भाषण साहित्याचार्य प० विश्वनाथ पढ़कर सुनायेंगे।

शास्त्री जी मच पर सामने आये और अपनी चुटिया को एक बार उगलियों से सहलाकर उसे अपने साफे के नीचे व्यवस्थित दबा कर बोले—

साहित्य गगन में ददीप्यमान आलोक से जगमगाने वाले नक्षत्रो!"

फौरन तालियो की कडकडाहट हुई। पण्डित जी का भाषण बहुत ऊंचे दर्जे का था। जन साधारण की बुद्धि इतने गहन विषय और उससे भी गहन प्रतिपादन को सुनने समझने में कुछ ओछी पडती थी। किन्तु पण्डित जी बिना श्रोता समुदाय की इच्छा अनिच्छा की परवाह किये एक एक शब्द पर जोर दे देकर अपना भाषण पढ़ते गये। साहित्य में रस, अलंकार, व्याकरण आदि तत्त्वो की बडी ही विद्वत्तापूर्ण चर्चा की गयी। भिन्न भिन्न साहित्य शास्त्रियों के मतो की चर्चा करते हुए अपनी आवाज एकाएक बुलन्द कर शास्त्री जी बोले—

किन्तु मेरा यह मत है कि— इसमें मेरा शब्द इतनी गर्जना के साथ कहा गया था कि लाउड स्पीकर भी कांप उठा।

अकस्मात् विरोधी-दल के लोग जिन कतारों में बैठे थे वहां से आवाज आयी— आप तो ऐसे पढ़ रहे हैं पण्डित जी कि यह मत आपका ही है। पर असल में भाषण तो मन्त्री जी का है।

राजयोग से प्रभावित पण्डित जी भला क्या किसी की हुज्जत

और हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास । क्या उनकी रामायण है क्या कथा है क्या आनन्द है कैसी सुन्दर ब्रज भाषा है ? अहा हा ।

लोगों ने तालियां बजाई पर धपधपाय । मन्त्री महोदय को लगा कि दर असल ऊंचे दर्जे का भाषण है लोगों को पसन्द आ रहा है । इसी ताव मे बोले—

तुलसीदास जी को पश्चात् दुनिया के कितने साहित्यिकों ने प्रेरणा नहीं ली ? यहां तक कि स्वयं वाल्मीकि ऋषि को भी उन्हीं का आधार लेना पड़ा ।

फिर तालियां और तालियों पर तालियां । वाकई ऐसा लगा था कि लोगों को भाषण बहुत ही अच्छा लग रहा था । डिप्टी कमिश्नर न जाने क्यों अपनी कुर्सी में ही इधर उधर भटक रहे थे । सामने देखा तो मन्त्री महोदय इस पतरे से खड़े थे कि जब भाषण इतना पसन्द किया जा रहा है तो कम से कम घण्टा भर बोले बगैर नहीं रहेंगे ।

अकस्मात् डिप्टी कमिश्नर का ध्यान श्रोताओं की ओर गया तो देखा कि म्युनिसिपल चुनाव में विरोधी दल के दस-बीस अक्खड़ लोग भी कुर्सी की दो कतार रोक कर बैठे हैं । भाषण का असली स्वागत तो उसी दल की ओर से हो रहा था ।

तालियों के हो हल्ले में उनके निज सहायक तथा मन्त्री महोदय की आपस में कुछ कानाफूसी हुई । फौरन एक गिलास पानी मंगवाया गया जिसे पीकर मन्त्री महोदय ने कहा—

इस प्रकार मैं आपके सामने बहुत देर तक बोल सकता हूं । पर मैं चाहता हूं कि आप साहित्य के बारे में मेरे गंभीर विचार सुनें । वे मैं आपके सामने रखता हूं ।

और उन्होंने आचार्य पं० विश्वनाथ जी शास्त्री के हस्त लिखित

भाषण का पढना शुरू किया। पर पण्डित जी का ज्ञान कितना भी अगाध क्यों न हो अक्षर इतने कलापूर्ण और कसीदेदार थे कि दो वाक्य भी ठीक से पढना मुश्किल हो गया था। माननीय व्याख्याता जी अटक-अटक जाते थे और लोग फिर ताली बजाने लगते थे। इसी हो हल्ले में फिर एक एक बार कानाफूसी हुई और प्रिंसिपल साहब ने घोषणा की कि मन्त्री महोदय का स्वास्थ्य कुछ कमजोर है इसलिये उनका भाषण साहित्याचार्य प० विश्वनाथ पढकर सुनावेंगे।

शास्त्री जी मंच पर सामने आये और अपनी चुटिया को एक बार उंगलियों से सहलाकर उसे अपने माथे के नीचे व्यवस्थित ढंग कर बोले—

साहित्य गगन में देदीप्यमान आलोक से जगमगाने वाले नक्षत्रो!

फौरन तालियों की कडकडाहट हुई। पण्डित जी का भाषण बहुत ऊंचे दर्जे का था। जन साधारण की बुद्धि इतने गहन विषय और उसमें भी गहन प्रतिपादन को सुनने-समझने में कुछ ओछी पडती थी। किन्तु पण्डित जी बिना श्रोता समुदाय की इच्छा अनिच्छा की परवाह किये एक एक शब्द पर जोर दे-देकर अपना भाषण पढते गये। साहित्य में काव्य अलंकार व्याकरण आदि तत्त्वों की बडी ही विद्वतापूर्ण चर्चा की गयी। भिन्न भिन्न साहित्य शास्त्रियों के मतों की चर्चा करते हुए अपनी आवाज एकाएक बुलन्द कर शास्त्री जी बोले—

किन्तु मेरा यह मत है कि— इसमें मेरा शब्द इतनी गर्जना के साथ कहा गया था कि लाऊड स्पीकर भी काँप उठा।

अकस्मात् विरोधी-दल के लोग जिन कतारों में बैठे थे वहाँ से आवाज आयी— आप तो ऐसे पढ रहे हैं पण्डित जी कि यह मत आपका ही है। पर असल में भाषण तो मन्त्री जी का है।

राज-योग से प्रभावित पण्डित जी भला क्या किसी की हुज्जत

मन्त्री महाशय ने शाम को राजधानी में लौटते ही मुख्य मन्त्री जी के बंगले पर जाकर उद्घाटन-समारोह का बड़े उत्साह के साथ वर्णन किया और वाह-वाही तथा शाबाशी वसूल कर ली।

प्रेस के लिये सम्मेलन के फोटो और मन्त्री महाशय के भाषण की प्रतियाँ भी प्रकाशन विभाग के द्वारा भिजवा दी गयीं। ये वही प्रतियाँ थीं जिन्हें पी० ए० साहब घर ही भूल गये थे।

दूसरे दिन प्रातःकालीन दैनिक-पत्रों में भाषण और समारोह के बड़े रोचक वर्णन पढ़ने के लिये मिले तथा कई फोटो छपे। हर जगह हर चीज बड़े *अव्यवस्थित ढंग से निपट गयी।*

सिर्फ एक ही बात खटक गयी—

कि रात को एक तार आया कि म्युनिसिपल चुनाव में शासकीय दल का थोड़े से वोटों से ही पराभव हो गया ! ○

प्रशंसा के चक्कर में फँसकर

○

मुझे बहुत सी चीजें प्रिय हैं। कहो तो कुछ के नाम बताऊँ? गुलाब का इत्र, जूही की माला, रेशम का कुर्ता, खोए की बर्फी, दही की गुझिया, असली घी की जलेबी और मगही पान मिल जाए तो समझ लीजिए— उहाँ छाँड़ि इहि वहै वकुण्ठा।



ब्राह्मण हूँ पर निरा पेटू नहीं। मुझे अपनी पुस्तकें भी कम प्रिय नहीं। लेकिन पुस्तकों से प्यार है इसके यह अर्थ नहीं कि मैं संसारी नहीं। बीवी बच्चे घर बार सभी तो मुझे प्यार हैं।

फिर भी एक वस्तु ऐसी बच ही जाती है जिसकी इन सब चीजों से कोई तुलना नहीं। वह कोई बहुत बड़ी वस्तु नहीं। एक छोटी सी बात है। यही अपनी मामूली सी प्रशंसा। बस, यही एक चीज ऐसी है जिसे सुनने के लिए मैं क्या नहीं कर सकता, क्या नहीं सह सकता?

खाना न दीजिए, कपड़ा न दीजिए, रुपया रोजगार न दीजिए लेकिन कृपा करके दिल खोलकर, झूठी सही, मेरी प्रशंसा किए जाइए, मैं आपकी जूतियों का गुलाम हूँ। उस हालत में मुझ जैसा बदाम का नौकर, ढूँढ़ने जाकर आप कहीं खोज भी न पाइएगा। चालीस के ऊपर आयु होती आई। सब्दा ही रास्ते बने। लेकिन टिके वही जो मेरी प्रशंसा

करत रहे। जिसने खरी कही मैंने उसमें अपनी राह गही। क्या बताऊं जानता सब हूं मगर इस मामले में मानता किसी की नहीं। खरी बात कह सकता हूं। लेकिन खरी सुनकर मुझे प्रसन्नता हर्गिज नहीं होती। अगर मुझ पर मीठी बात का ही होना है। इसे लाचारी कहिए चाहे तो गुरू भी कह लीजिए। बात यह मुझमें है। मैं इससे इनकार नहीं करता।

हिन्दुस्तान में सोने का बड़ा मोल है। लड़ाई समाप्त हुए एक जमाना हो गया मगर इसके भाव गिरते ही नहीं। कहते हैं 'प्लाटिनम' का मूल्य सोने से भी बड़ा है। रत्न-जवाहरातों के क्या कहने! लेकिन मेरी दृष्टि में इन सबका मूल्य प्रशंसा के दो मीठे शब्दों के मुकाबले तीन कौड़ी का भी नहीं।

इसीलिए मैं प्रशंसक के मूल्य को अच्छी तरह जानता हूं। क्या न जानूं? सरकारें भी तो प्रशंसकों के बल पर चलती हैं। सरकार क्या भगवान का भी अगर प्रशंसकों का टोटा पड़ जाय तो उसकी भी बधिया बैठ जाए। तरह-तरह के लालच देकर वह अपने गीत उनसे गवाया करता है। कवियों के साथ भी यही बात है। कवि लोग अन्न-जल पर थोड़े ही जीते हैं! ये तो प्रशंसा के पादप हैं। मिलती रहेगी तो खिलते रहेंगे नहीं तो कुम्हलाते क्या देर लगती है। इसीलिए उस दिन रेल में जब मुझे मेरी रचनाओं के एक प्रशंसक अनायास ही मिल गए तो खुशी का ठिकाना न रहा।

हम लोग उस दिन गाजियाबाद से दिल्ली लौट रहे थे। गाड़ी में जो साहित्य चर्चा चली तो बात बात में एक महोदय मेरा नाम जान गए। वह स्वयं मेरे पास खिसक आए। कहने लगे धन्य भाग! वर्षों से आपका नाम पढ़ते-सुनते थे। बड़ी तमन्ना थी आपके दर्शनों की। क्या कमाल का लिखते हैं आप? आपकी रचनाओं को तो हमने अखबारों से काट काटकर एक रजिस्टर में चिपका रखा है। आपकी पुस्तकों के सभी

संस्करण हमारे पास हैं । मेरी पत्नी तो आपकी रचनाओं के पीछे पगलिया जैसे पागल है । और तो और मेरी छोटी मुन्नी को भी आपकी कई कवि ताएं कंठस्थ हैं ।

शब्द क्या थे मानो बूंद बूंद से अमृत भर रहा था । यात्रा की सारी थकान डिब्बा की टन टेन और साहित्य चर्चा से उत्पन्न उमस जम सब-कुछ शीतल तरल और बहु रसमय हो चला । मेरे मन की कली जैसे खट करके खिल उठी ।

बगल में बैठे अपने मित्रों की ओर मैंने जरा तनकर देखा और महसूस किया कि उन पर ही नहीं इन अनजान मित्र की बातों का असर सारे डिब्बे पर पड़ा है । कुछ ही सेकिंड में मैं उस डिब्बे का एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गया ।

अपनी प्रशंसा सुनकर क्योंकि सज्जन संकोच करने लगते हैं मैंने भी वही किया । मैं विनयी हो आया । कहने लगा जी मैं क्या हूं ? यों ही कुछ लिख लिखा लेता हूं । आप जैसे गुणीजनों को कुछ पसन्द आ जाय मेरे लिए यही बहुत बड़ी बात है ।

विनय बहुत बड़ी बात है । विनय बड़ों का ही शोभा देती है । अनजान मित्र कहने लगे— ज्ञानी ही सहनशील होते हैं । शिष्टता ओछों के बाने नहीं आती । ओछे बरतन में तो पानी छलकता है । मैं हिन्दुस्तान के अनेक साहित्यकारों और कलाविदों से मिला हूं । मुंहदेखी नहीं कहता राम राम उनमें यह बात कहां ? आपको तो देखकर ही ऐसा लगता है जैसे अपने परिवार के ही आदमी हैं । —कहते कहते उन्होंने सिगरेट का पैकिट मेरी ओर बढ़ाया ।

मैंने और भी विनम्र होकर हाथ जोड़ लिए । तो वह कहने लगे— 'अरे आप सिगरेट भी नहीं पीते ? तब और क्या पीते होंगे ? लेकिन इतनी मादक इतनी सरस चीजें आप लिखते कैसे हैं ? सच कहता हूं कि

मैं तो जब आपकी रचनाएं पढ़ने लगता हूं तो सुध बुध खो बैठता हूं। अहा! अभी परसों के साप्ताहिक में आपकी वह भ्रमर और कली वाली रचना छपी थी! क्या कहने हैं? दिल बाग-बाग होगया!'

बातों का यह सिलसिला अभी और लम्बा चलता, मगर गाड़ी शाहदरा स्टेशन पार कर यमुना के पुल पर आ गई थी। दिल्ली जंक्शन आने ही वाला था।

बातों-बातों में ज्ञात हुआ कि मेरे मेहरबान दोस्त कलकत्ते में अपना कोई बड़ा व्यापार चलाते हैं। दो दिन के लिए किसी काम से राजधानी आए हैं। वह जिस होटल में ठहरने वाले थे उन्होंने उसका पता भी बताया और आग्रह किया कि मैं उनके यहां कम-से कम एक बार चाय पीकर तो उन्हें अवश्य ही कृतार्थ करूं।

दिल्ली में बसे १२ वर्ष से ऊपर हो गये। लेकिन अभी भी दिल्ली मुझ से कुछ दूर ही बनी हुई है। पुरखे कह गये हैं कि दिल्ली में आदमी को जरा सोच समझकर चलना चाहिये। यहां लोगों से व्यवहार करते समय उन्हें बीस बार परखना चाहिये। इसलिए चाहे लाख कहे मैं किसी को अपना घर नहीं दिखाता। मित्र लोग मेरी इस आदत से भली भांति परिचित हैं लेकिन कुछ अपनी आदत कुछ पत्नी के अद्भुत स्वभाव और कुछ अल्प बचत योजना का असर कि मित्रों के उलाहने और अमित्रों के ताने कभी मुझ पर असर नहीं करते।

लेकिन इस बार की बात दूसरी थी क्योंकि श्रीमती जी मैके पधारी हुई थीं और अभी महीने की सिर्फ तीसरी ही तारीख थी। आपसे क्या छिपाऊं सबसे बड़ी बात यह कि इन गुण ग्राहक मित्र की बातों से अभी मेरी पूरी तसल्ली भी नहीं हुई थी। परिणाम यह कि एक कदम गलत उठ गया। बस ऐसे मामलों में मैं उचित अनुचित का जरा कम ही ख्याल रखता हूं। लेकिन इस बार न जाने क्या हुआ कि उनके मुख से अपनी जरा

अब मान्ि भा भराम हनुमन्ता।
बिन हरि कृपा मिलहि नहीं सता ॥

पडा-पडा मैं यही सोचता रहा कि इसी प्रकार कोई नौसक मिल जाय तो मुझे श्याम कालिदास मिल्टन, शक्सपि दर नही लगेगी। सोन सोन मुझे यह विश्वास भी हो गया कि ईर्ष्या करें मेरी कला का साधना का, समझने वाले अब पैदा, मेर महान् बनने म अब देर नही।

दूसरे दिन काफी देर गए मरी आख खुली। रात क. सुमार अभी पूरा-पूरा नहा उतरा था। मैंने आइने म गौर बाल जरा सीधे किए। कमीज डालकर बाहर चाय पीने निर आया जेब खाली है। सोचा कुछ पस लेना चलू। कप की र भी चुकाना है।

लेकिन मेज की दराज खोली ता सन्न रह गया। व्यस्त पडी थी। मनी बग गायब था। दौडकर दरवाजे पर गा ताला कुजी सब अन्दर से ठीक तरह बन्द थे। जीना खिडकी सलामत थ। रात को तो सोने के बाद कोई आया नहीं। तब हुआ?

मेरी आखों के सामने स प्रशसा का परदा छर से पि एक एक करके मुझे कल शाम की सारी घटनाए याद आने ल मुझे काफी महगी पडी थी। मेरे महरबान मित्र महीने भर का अपनी प्रशसाओं के पारिश्रमिक म वसूल कर ले गए थ। भल वही होटलों का पक्का पता बता दते हैं।

चाय के जूठ बतन चारों तरफ फले सिगरेटों के टुक छिलके, जूठी तश्तरिया मानो सब विद्रप से मुह बिचकाकर मु थ—'कहिए महाशय महाकवि बनने म अब कितनी दर है?

चिरजी लाल पाराशर •

शायर की साधना

○

नजीर मिया का चेहरा देख कर ही हम यह भाप चुके थ कि इस शख्स मे शायरी की बहुत सी अलामतें मौजूद है। और जब उन्होने अपने नाम क आगे लतयानवी तखल्लुस (उपनाम) जोड लेने की बात हमे बतायी तो हम पूरी तरह विश्वास हो गया कि य शायर हो हा गये

अब रही साधना की बात सो यह कोई आवश्यक नही कि अब शायरी करने से पहले ही साधना शुरू करें और शायरी बाद म करें। शायरी से प्रथम साधना करने की तो पद्धति प्राचीन थी। वर्तमान युग प्रगतिशील है। इस युग म साधना पीछे होनी है साहित्य सजन पहले शुरू होता है। तिस पर भी यदि इस जीवन मे अवसर नही मिला तो इस इल्लत को दूसरे जीवन के लिए छोड दिया जाता है।

नजीर लतयानवी के बारे म भी यही विचार था कि यह महोदय भी पहले शायर बने गे उसके बाद भी यदि जिन्दगी बाकी रही तो साधक बन जायेंगे। हमारा यह विचार इसलिए था कि कई समझदार सम्पादकों ने तो उन्हे पर्याप्त प्रोत्साहन दिया ही था, शहर के कई कब्रिस्तानो के भी अनेक मुर्दे इनकी शायरी का स्वाद जी भर कर ले चुके

हमारे जवाब पर नजीर मिया पतली मास लकर फीकी सी हसी हस तो अवश्य किन्तु वह बिल्कुल बजान हसी थी जिसका पहले ही कचूमर निकल चुका था।

कुछ देर बाद दोनो का समझा बुझा कर हम चल आय। समझ लिया भगडा समाप्त हुआ। और मिया बीवी का भगडा ही क्या?

यहा भी हमारा साचा हुआ गलत निकला। हमारे जाते ही भगडा घटने के बजाय और बढ गया। नजीर मिया ने कसम खाकर कहा हम रोज इसी तरह बठा करेंगे और तुम्हारे सामने तो खास तौर से इस बात का ध्यान रखेंगे कि यदि हम और ढग स भी बठे हो तो तुम्हे देख कर फिर एस ही ऊटामन स बठ जाए।

नजीर क कसम खाते ही नगीना ने भी कसम खाई— खुदा जान मैं अपनी इन आखो से तुम्हे जानवरो की तरह बठा नहीं देख सकती।

इस भगड का नतीजा यह निकला कि घर म शाम तक पाकिस्तान बन गया। तख्तो के पार्टीशन से कमरे का बटवारा हो गया। अपन आधे हिस्से क साथ नगीना ने बावर्चीखाने पर भी कब्जा किया। दूसरी ओर नजीर मिया ने अपनी सरहद पर बीबी की जासूसी क भय स तख्तो की दरारों को भी बन्द कर दिया।

यह सब हो गया। अब यदि नगीना बाहर आती तो नजीर मियां की ओर स मुह फर कर या चेहरे पर नकाब डाल कर निकलती। उधर नजीर भी बिना नगीना की ओर देखे ही निकल जाते।

कुछ दिन बिना भभट क पार्टीशन क दोनो ओर सब कुछ शान्ति स चलता रहा। नजीर मिया क सामने यह दिक्कत अलबत्ता आ रही थी कि शायरी क लिए पहल तो वह नगीना को ही दूर या खास मान लिया करत थ अब उसक बगर दिक्कत पड़ी। यह दिक्कत इसलिए और बढ़ी कि इस उम्र म उन्हें बाहर खाकी मयस्सर होने भी मुश्किल थ। किन्तु

फिर भी उनकी शायरी का शौक बदस्तूर जारी रहा।

अन्त म हर श म जलवा तेरा देखता हू की युक्ति को नजीर मिया ने सार्थक किया और बाजार से एक काली सी मुर्गी खरीद लाए।

नगीना ने मिया की मुर्गी लाते देखा तो मुह का जायका बदला। सोचा 'गोश्त के लिए मुझसे अब कहने ही वाले हैं।' पर तु शायर साहब तो उसे लाय ही और मकसद के लिए थे।

रात हुइ शायर साहब ने मुर्गी को टक पर बिठाया। अपना ऊ टासन लगाया। आखें मीचकर मुर्गी म 'हूर की कल्पना की। उन्ह लगा मानो काली हूर उनका दिल लेकर चली जा रही है। तत्काल उन्हे शेर सूझा। उन्होन ऊ चा आवाज म कहा—

आ हुस्न तुझ पर कहर हो सारी खुदाई का।
अल्लाह कर मिट जाय निशा हर लुगाई का।

नगीना ने अपन दात काट लिए—तोबा! तोबा!! इस जहालत की भी हद है। मरे बहान दुनिया भर की औरतो को कोसा जा रहा है और मिया खुद अपनी करतूत दखत नही।

नगीना बडबडाती रही। देर कहकर शायर साहब ने आखें खोली। मुर्गी इतने म उचक कर छत पर पहुच चुकी थी। शायर साहब ने पुन उसे पकडा। चाहा उससे नजर मिला कर देखें। बाद म अपन दिल की धडकनो को गिनें लकिन मुर्गी हूर बनने के लिय तयार नही हुई। नजीर मिया नाराज होकर लौट आय।

दूसरे दिन दिन निकलते ही वह मुर्गी को एक पडौसी का तोहफ के तौर पर दे आय। एक बार नगीना के मन म आया भी कि चल कर मिया से पूछू एक डढ रुपय की मुर्गी को क्यो खरात कर आय। परन्तु बोलने की कसम खा चुकी थी अत खामोश रहीं।

दो-तीन दिन शायर साहब ने आराम से गुजारे। लिहाफ म लेटे

अब उनके सामने महज यह सवाल था कि इस गजल । का गाग पा नाग
पकड़ कर घर म बाहर कम करे । उधर शायर साहब के सामने जिन्दगी
अपने पूरे हुस्न और जमाने के साथ सभी उन पर बार पर बार किये जा
रही थी और नजीर मिया न ओठों पर गुर्र के गुर्र गर मड़रा रहे थ । वह
तेज आवाज से फरमा रहे थ —

अन्दाज क्या को तर्ज तनराव आज
जनवा हो जिगर शोजन तेरी जुदाई का ।
मर दिल वकरार का पहलू म पानना
मारा फिरे नजीर न तेरी जुदाई का ।

शायर साहब का यह शेर सुनते ही नगीना के शरीर म आग लग गयी । सारा शरीर कांप गया । मन ही मन बोली— बड़े शायर बन फिरते हैं बन्द ही मारे मुंह न के सामने इस शगोफजानी और इन शायर साहब को अगर बनराव न किया तो मेरा नाम भी नगीना नहीं ।

अभी नगीना बुदबुदा ही रही थी कि शायर साहब की ओर से आवाज आयी— आह ! जिगर जख्मी किया दिल छीन लिया ।

शायर साहब के इन शब्दों ने पतोल पर चिनगारी का काम किया । उसके मन से आवाज निकली— सुबह कभी आज हो फसला होगा । अभी ही फसला होगा । मैं देखता हू जिगर को जख्मी करने वाली और दिल को छानने वाली यह छिनाल कसी हूर है ।

नगीना चली धीरे से पार्टीशन का तख्ता हटाया और दबे पर शायर साहब के कमरे म दाखिल हो गयी । कमरे म घुस कर जसे ही नगीना ने क्रोध-भरी नजर नजीर पर उठायी तसे ही ठगी की ठगी रह गयी । नजीर मिया एक बोरी बिछाये ऊटासन लगाये आख बन्द किये बठे थे । उनके सामने खड़ी हुई कुतिया इतमिनान से जलेबिया खा रही थी ।

नगीना के पैर गायर माहब की इस विकट साधना का दख कर काप गय। चहरे पर पसीना आ गया। दिल म आया आग बढकर नजीर मिया के पैर पकड कर माफी माग ल। तभी नजीर मिया के ओठ फडके—

कहता हू आज साकी तेरे कमर नही है
काया जुडी है तरी फूलो की बल स।

अभी नजीर मिया पूरा गेर कह भी न पाय थ कि नगीना कटे पेड की तरह नजार मिया की गाद म जा गिरी।

नजीर मिया चौंक गय। नगीना आखें बन्द किय पडी थी। नजीर मिया क ओठ फिर हिले—

आया मरा महबूब गुक्र परवरदिगार का।

तुरन्त नगीना बोल उठी—

हो जाय सत्यानाश लगी इस दीवार का।

सुनते हैं नजीर मिया की साधना अब भी बदस्तूर जारी है और बावर्चीखाने का दरवाजा उनके लिय फिर खुल गया है। ○

पति-शाला

○

"क्यों जी क्या सो गये ?

× × ×

कुछ सुना कि सचमुच सो गये ?'

'ऐं ? क्या कहा ?

'तुम्हारा सिर।

इतना कह के वह पैर पटक कर पाजेब से कोहराम मचाती हुई चली गई। अब नींद क्या खाक आय ? कहां इतनी मुश्किलों से जरा सी झपकी आई थी कि आकर जगा दिया। जब कुछ कहना ही नहीं था तो मेरी नींद हराम करने की क्या जरूरत थी ? मगर उसको कौन समझाव ? लीजिये वह फिर आ पहुंची।

'क्या इसीलिये तुम्हें जगा गई थी कि तुम पड़े-पड़े खर्राटे भरो ?

"कौन खर्राटे भरता है ? जागता तो हूं।

"जागते हो ? झूठ और मुंह पर ?'

अच्छा मेरी बात का एतबार नहीं तो तुम्हीं आंखें खोलकर देख लो कि मैं जागता हूं या सो रहा हूं।'

'बस बस रहने दो। अब लगे मुझको अधी भी बनाने ? यह देखो।

'राम ! राम ! तुम्हे भला कौन अधी कह सकता है जिसे तीनों निरलाक हरदम सुभाद ते हैं ?

तब तुमने मुझे आखें खोलकर देखने का ताना क्यों मारा ?'

बवकूफी हुई। गलती हुई ! कसूर हुआ। अच्छा बात क्या है ? क्या कहना चाहती हो ? कुछ कहो तो सही।'

'अन्धे क आग राय मुफ्त म अपना दीदा खोय।

'बहकी-बहकी बातें क्यो करती हो ? असली बात तो बताओ।"

'तुम्ह अपन सोन से फुरसत मिल तब तो कोई कुछ कहे। यहा ता जब देखो तब आखो म मलिछ घेरे रहता है। चारपाई पर पडे नहीं कि लग भसे की तरह सा मा करन।'

अरे भाई रात के वक्त जरा कमर सीधी न करू तो क्या अपना सर पीटू ? हरवाह भी तो इस वक्त आराम करत हैं।

'तो जी भर क कमर सीधी करत क्यो नही ? तुम्ह मना कौन करता है ? चाह कोई मरे या जिये तुम्ह तो बस अपने सोने से मतलब है। आग लग निगोडी ऐसी नीद पर।'

फिर तिनकती हुई चली गई। और गुस्से मे दरवाजा इतने जोर म भेड गइ कि मर कान के पर्दे बेचारे त्राहि त्राहि पुकारने लगे। एक तो बुढापे की नीद कमबख्त यो ही बडे नखरो स आती है उस पर ऐसी आफत म अब भला किस मरदूद की आखें लग सकती थी ? चुपचाप छत की कडिया गिनने लगा।

देश सुधारकों को विवाहोच्छेद बिल पास कराना तो सूझा मगर किसी हत्यारे न हम एसे बूढ़े पतियो की खबर न ली। सरकार भी बुढापे में

लागों को पेशन देकर उन्हें काम काज में छुट्टी दे देती है। मगर हाय रे पतिगारी! इसमें पेंशन भी नहीं। दोहाई है जोरूगण की दयालु ललनाओं की। आप लोगों की जाति की प्रकृति बड़ी कोमल कही जाती है। उसका हृदय बहुत ही नम्र बताया जाता है। फिर यह इतना अंधेर क्यों है? हम पतियों पर इतनी कठोरता क्या करती हैं? जरा इन लोगों पर तरस खाइए। और सरकार की तरह आप भी इन लोगों को इस उम्र में पेन्शन दे दिया करें तो क्या कहना है। पेन्शन न दे सकें तो पचपन साल का कानून लगाकर इन्हें आप यों ही छुटकारा दे सकती हैं। आप इनकी मालिक हैं हाकिम हैं अफसर हैं। आप चाहें तो इनके लिए सब कुछ कर सकती है। ये बेचारे आप ही अधमरे हो रहे हैं। इन्हें अपनी लाश खुद ही भारी हो रही है। उस पर आपके गर्मागर्म नखरों का बोझ भला यह मुर्दे किस तरह उठा सकते हैं? जरा सोचिए तो। जिस तरह बूढ़ी गायों के लिये सज्जनों ने गऊशालायें बनवा रखी हैं उसी तरह आप लोग भी अगर चन्दा करके हम बूढ़े पतियों के लिए एक पतिशाला बनवा देतीं तो हम लोगों के रोयें रोयें आप लोगों को असीसते।

दरवाजा भड़ से खुला। और बच्चा प से रो पड़ा। इस दफा श्रीमती जी अकेली नहीं आईं। बल्कि मुन्ना को भी जगाकर उठा लाईं। यह दुहरा जुल्म सहने के लिये इस बुढ़ापे में कहां से कलेजा लाऊं? उस वक्त में मुन्ना को देखते ही मैं कांप उठा। समझ गया कि हमारी रात अब जहन्नुम की रात हो गई। क्योंकि वह पाजी ही नहीं, पूरा शैतान भी है। सच तो यह है कि वह अपने बाप का नहीं बल्कि अपनी सगी मां का बेटा है। तभी तो वह जब तक अपनी मां के पास रहता है तब तक जरा कुनमुनाता तक नहीं। मगर जहां बाप की गोद में आया तहां कमबख्त चिल्ला चिल्ला कर वह हाय-तोबा मचा देता है कि कुछ न पूछिए। उस वक्त यही जी चाहता है कि इसको लिये लिये एकदम कुएं में कूद पड़ूं। इसी आफत के परकाल को श्रीमती जी मेरे ऊपर ढकेल कर यह कहती हुई चली गईं कि—'जब

मुझसे कुछ मतलब ही नहीं तो अपना तहवा भी ले जाओ।

गजब हो गया। मेरे पर पहाड़ फट पड़ा। जान सांसत में पड़ गई। डेढ़ बालिश्त का मनुआ और पूरे साढ़े पांच फिट का मैं। मगर उसकी धमाबाजियों के आगे मेरा एक दाव पेच एक न चला। पहिले तो उसने चिल्ला चिल्ला कर मुझे एकदम बहरा बना दिया। उसके बाद मिनट में छिन्तर दफे के हिसाब से मेरी तोंद पर लतमर्दन करने लगा। उस पर भी उस पाजी का पेट न भरा तो मारे गुस्से के मेरा बिछावन ही खराब कर दिया। चलिये लेटने का झंझट भी बिगड़ गया। यह सब सिखाई पढ़ाई बात थी, वर्ना जरा से जीव में इतना पाजीपन भला कहां मुमकिन हो सकता है ?

क्या करता ? झख मारकर चारपाई छोड़नी पड़ी। और सुराही के पानी से कुछ धोना धाना भी पड़ा। पानी लगते ही वह और भी मचल उठा। यहां दम घुटने लगा। गोद में लेकर बरामदे में दो घण्टे तक टहला। कुत्ते बिल्ली घोड़ा गदहा सब की बोलियां बोली। लू लू लू लू भी किया। तरह-तरह से मुंह बनाया। आंखें मटकाईं। सब कुछ करके हार गया। मगर उस शैतान ने अपना सुर न बदला।

हाय रे बुढ़ापे की रात ! न जाने ससुरी कितनी लम्बी हो जाती है कि काटे नहीं कटती। जवानी में पलक मारते ही सुबह हो जाती थी मगर अब आधी रात ही से सुबह का तारा देखना शुरू करता हूं। किन्तु सारी रात देखने पर भी आधी रात ज्यों की त्यों बनी रहती है। रत्ती भर भी कम नहीं होती। तब भला इस आफत के परकाले के साथ सुबह देखने की कभी उम्मीद हो सकती है ? इसलिये आजिज आकर मैं श्रीमतीजी को ढूंढने लगा।

घर भर ढूंढ डाला। कोठा भी छान आया। मगर उसका कहीं पता न पाया। तब तो मुझे बड़ी फिक्र हुई। उनके लापता होने की नहीं बल्कि इस मुसीबत से उद्धार पाने के लिये। क्योंकि उसके बिना मनुआ

को परिंदे भी नहीं शान्त कर सकते। मगर वह मुझे त्याग ही गई थी तो इसको भी अपने साथ ले जाती तो उसका बड़ा गुण मानता। मज़े में घर का दरवाज़ा बन्द करके टाँगें पसार कर बखटके सोता, मगर अब तो सोना गया भाड़ में। इस चिल्लपों के आगे जान संकट में पड़ गई। घड़ी देखी, मगर हाय! उसमें अभी सिर्फ साढ़े बारह ही बजे थे। मैंने झल्लाकर घड़ा पटक दी। वैसे ही चौके में से गहनों की कुछ झनकार सुनाई पड़ी।

चौके में गया तो देखा, कि श्रीमती जी एक दरी बिछाये मज़े में जमीन ही पर मीठी नींद का मज़ा ले रही हैं। वाह! वाह! घर भर में आपको सोने की जगह यही मिली। अगर उनके गहनों की झनकार न सुन पाता तो मुझे उम्र भर भी ख्याल नहीं हो सकता था कि श्रीमती जी ऐसी जगह आराम कर रही हैं, वह भी गहरी नींद में। ईश्वर जाने नींद में खर्राटे भर रही थीं या गुस्से में फुफकार रही थीं। खैर किसी हालत में थीं मिल तो गई यही बड़ी बात हुई। मेरी जान में जान आई। मैंने झट मुनुआ को उनकी बगल में लिटा दिया। वह उन्हें पाते ही ऐसा चुप हुआ मानो वह रोना जानता ही न था। इतने में उन्होंने करवट ली और मैं दुम दबाकर वहाँ से कमर पकड़ गिरता-पड़ता काँपता-कूदता भागा और मकान का सदर दरवाज़ा खोलकर एकदम सड़क पर ही आकर दम लिया।

दुनिया वाले तो नहीं मगर ईश्वर हमारे मेरी इस दुर्दशा पर पसीज उठे। और इतने कि लगे आप बहाने। सारे कपड़े भीग गये। उनकी इस हमदर्दी में श्रीमती जी की गर्मागर्म फटकार लाख दर्जे अच्छी थी। मैं फिर घर की तरफ दौड़ा।

मगर घर का द्वार भीतर से बन्द। अब कहाँ जाता? हम जैसे पतियों के लिए कहीं काजी हाउस भी नहीं।

इसीलिए तो कहता हूँ भाई! कोई पतिखाना बनवा दो। बड़ा ही पुण्य होगा! ○

इन मू छन के बारन ऊपर

O

मुद्दत हुई जब मैं भी क्लीन शेव्ड रहता था। चेहरे पर वह सफाई और चिकनाई थी कि बैठते समय मक्खी को भी फिसलने का डर बना रहता था। पर एक दिन दिल की गहराइयो से सदा आई इलहाम हुआ कि मू छों के बिना तुम्हारी परसोनालिटी अपूर्ण है। मा बिना आगा पीछा सोच मैंने मू छ उगानी आरम्भ कर दीं। शेव करने बैठना तो दाढी साफ करते करते रेजर पुरानी आदत के मुताबिक मू छो मे भी भ्रम करने लपक जाता। यही नही मू छ के नीचे की चमडी भी ब्लेड म रगड खाने को उतावली हो जाती। पर भगवान को यही मजूर था कि मेरे मू छ उगें।



मू छ उगी तो शुरू शुरू म बहुत अटपटा लगा। मु ह पर हाथ फेरने का तो मजा ही किरकिरा हो गया। दूध या लस्सी म कभी सावका पड जाता तो मलाई तो सारी मूछो म ही अटक कर रह जाती जैसे गटर की जाली म कचरा अटक कर रह जाता है। मलाई न मिलने का उतना दुख नही था जितना मूछो को फिर से साफ करने म दिक्कत थी। जैसे लोग दातो को भोजन के तुरन्त ही बाद साफ करते हैं मुझे भी मू छों को तुरत ही साफ करना पडता था। दो चार मिनट भी मलाई को मू छो पर आराम करने देना तो टोकने वालो की कमी न थी।

भूत म कभी पाश्मक पार्न क गायो नह जाता था गोचता कि मैं गा हूं पा कोई पोर है। गायके किमरा पाग है पर जातो क निा नराग बार ना तीव पूग कर भी मेगना पड़ा। कभी विचार पाता कि गा ना गागन पके भाई गाग्न है पोर या मरी पापु नगानक गाय बढ़ बढ़ गई है।

धार धार म ता म मरा गरिचय बढ़ने लगा पोर मैं पल्ना मामा मुछन्दर बन बठा। मिन मभ मिवान कि मार ज्र पोर माद्न्र म मगिर अ तर रही है। मगर मैं जानता था कि गमा म बयन स्पिारण पहल हैं। वर्षों म पानी पागो जनन म मवारी य म द्दे पबना मरी प्रागा धार है। मैं ना किमा तेन रगगान की प्रा ा म हूं जो पाकर कि इन मूछन क वाग्न ऊपर गज ।

भर तो मूछ रखने का मरा मनुभव कई वर्षों का है पोर स्थानाय मुद्रन्रो म मिनिमारिटी की न्टि स मरा स्थान काफी ऊंचा है। जो मुझम जूनियर हैं व मरा रौब मानते हैं पौर जिन्होंने कभी मूछ बढ़ाई ही नहीं उन विचारा की तो मुझस प्रात मिलान की भी ताब नहीं। घर स दफ्तर जाने पौर दफ्तर स घर प्रात हुए मरी पाखें कवल उन्हीं चहरा पर टिकती हैं जिन पर मूछ हो। लकिन साहब जमाना गमा जनाना पा गया है कि मूछ के दर्शन भाग्य स ही कभी कभी होते हैं। सच मानिय मूछा की तलाश म छुट्टी क दिन जब लोग क्रिकेट की कमन्ट्री सुनने म व्यस्त रहत हैं मैं घटो रेलवे प्लेटफार्म पर या सिनेमा क बुकिंग हाउस पर खड़ा मूछ का कोई सुन्दर सा जोड़ा खोजता हूं।

अफसोस है मुझे तो कवल इतना ही कि मेरी मूछ इक्दार न हुई। मूछ की किस्म तो अनेक देखने म आई मसलन मच्छर छाप मक्खी छाप नरई तुर्गी तलवार खसखसी और भव्वेदार मगर इक्दार मूछ की तो शान ही निराली है। कहते हैं कि डाकू मानसिंह की मूछ कागजी

नाव्रू रत्न दन पर भी भुकती नही थी पर जनाब हमारी मू छ क निए ना सरसो का दाना भा भारी पड गया । पडता भी कस नही कहा डाबू और कहा क्लक ! दफ्तर जायें तो बड बाबू की लताड और घर आयें तो श्रीमता जी की फटकार । भना बताइय मू छ पनपें कसे ? चेष्टा बहुत की मैंन कि मरी मू छ कुत्ता की पू छ की तरह बन पर जनाब किस्मत क आग किसकी चला है ! कुत्ते की पू छ को छह महीन बाद नली स निकाला तो तुरन्त हा घूम कर डक्दार हो गई और हमारी मू छ छह महीन तक पट्टी बाधे रहन के बाद जब खाली गइ ता घोडे की पू छ का भाति फिर लटक आई । कई प्रकार की क्लफ का इस्तमाल किया पर आखिर वही भाड़ की भाड़ ।

जब चीन स लडाई शरू हुई तो यह सोच कर चित्त बडा प्रसन्न हुआ कि अब मू छो का राष्ट्रीय महत्त्व बढेगा । दश की सुरक्षा क लिय एन डी एफ होम गाड स सिविल डिफन्स आदि अनक याजनाए सामने आई केन्द्रीय सन्नो म अनेक बिल और सशोधन प्रस्तुत हुए पर अनिवाय सनिक शिक्षा की भाति अनिवाय मुच्छारोपण पर किसी का ध्यान न गया । तब मैंन अपना एक निबन्ध 'आपातकालीन स्थिति म मू छ का महत्त्व शीषक से दिल्ली क एक दैनिक-पत्र म बडा मिन्नता क बाद प्रकाशित करवाया ।

अगल दिन जब सोकर उठा तो देख कर हैरान रह गया कि अनक पत्र प्रतिनिधि सवाददाता और फोटोग्राफर मेरे इटरव्यू क लिय बाहर खडे हैं । मुझे समझते दर न लगी कि मरे निब ध ने पत्र-ससार म धूम मचा दी है । मैं मुस्कुराता हुआ उनक बीच आ खडा हुआ । सामने दायें बायें बहुत से कैमरे क्लिक हो उठ । हैड शेक क बाद प्रश्न पूछे जान लग ।

यदि सरकार प्रतिरक्षा विभाग के अन्तगत एक मू छ विभाग खोलना चाहे तो क्या आप उस विभाग के डायरक्टर बनना पसन्द करेंगे ?

शौक से ।

फिर तो शायद मू छ रखना समस्त दशवासियो के लिय अनिवाय

कर देंगे ?

जी हां।

'स्त्रियों के लिये भी ?

जी हां। जी ? जी नहीं। क्या बात करते हैं आप ?

'जब से आप मूछ रखने लगे हैं तब से आपको अपने दिमाग में कहीं पर कुछ थोड़ा सी गड़बड़ मालूम हुई ?

'टाक म म — मैंने क्रोध में भर कर कहा।

'आपने अपनी मूछों का बीज कहां से इम्पोर्ट किया ?

नासेस नो कमेंट !

'खैर छोड़िये अगर बात कांफिडेन्शिअल न हो तो बताने की कृपा कीजिये कि जब आप मुस्कुराते हैं तो वृद्ध से क्या लगते हैं ?

सच मानिये मेरा चेहरा क्रोध से तमतमा आया। प्रश्नकर्ता को उसकी बेहूदगी के लिये डांटू इसके पहले ही ठहाके के बीच भड़भड़ाता हुआ एक और प्रश्न आया—

'क्या आप निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि आपके पूर्वजों में डॉन क्विग्जोट नाम का कोई आदमी नहीं था ?

नो कमेंट ! —क्रोध में उबल कर मैं बोला।

जाने दीजिये। लेकिन इतना तो आपको बताना ही पड़ेगा कि क्या मूछ रखने वाले के लिये पूछ रखना अनिवार्य नहीं है ?'

मैं तिलमिला गया। प्रश्नकर्ता की ओर उन्मुख होकर सोच ही रहा था कि क्या उत्तर दूं कि पीठ पीछे खड़े किन्हीं महाशय ने धीरे से कहा —नो कमेंट ! वह जोर का ठहाका लगा कि मैं सीधा अपने कमरे में घुस गया और भड़ाम से किवाड़ बंद कर लिये।

बाहर फिर कहकहे लगे। कुछ फिकरे भी सुनाई पड़े—

यार, मजा आ गया।"

पूरा 'वो' है।
दुनिया म कमी नहीं है गालिब, एक ढूंढो
हजार मिलते हैं।

फिर वहक्ह। जब कुछ देर बाद पूर्ण शान्ति हो गई तो मैं सीधा आईने के सामने जा खड़ा हुआ। देखा मूछें और भी लटक आई हैं। बहुत देर खड़े रहने के बाद भी समझ में नहीं आया कि आज जो मट्टी पलीद हुई है वह मूछ की निबलता के कारण हुई है या मस्तिष्क की निबलता के कारण? मगर मस्तिष्क तो मेरा इतना बादा कभी नहीं था। कहीं ऐसा तो नहीं है कि मस्तिष्क की खाद ये मूछें खींच लेती हों?

उसी शाम मैं एक कमिस्ट की दूकान पर जा खड़ा हुआ। काउण्टर पर एक सुन्दर-सी युवती थी।

'क्या जी यहां खाद मिलती है?'

'खाद? कसी खाद?' महिला चकराई और उसने मुझे यो घूरा जैसे मैं किसी पागलखाने से भाग आया होऊं।

चौंकिये नहीं मैं पूरे होश में हूं।" मैंने कहा, मेरा मतलब खाद से ही है। मूछों की खाद।

महिला और भी चकराई। फिर तुरन्त ही सभल गई और अपनी स्निग्ध दृष्टि मेरी मूछों पर बखेरती हुई बोली—

आप किसी कम्पटीशन में भाग ले रहे हैं?

इस बार मेरे चकराने की बारी थी। मैं अचकचाया कम्पटीशन? कसा कम्पटीशन?

वह मुस्कराई। बोली— 'यही मूछों का।"

'ओह मैं समझा

यह लीजिए इस पते पर मिल जायगी कहते हुए उसने एक चिट लिख कर मेरे आगे कर दी। थक्यू कहकर मैंने उस जब के हवाले किया। घर जा कर देखा उस पर अंग्रेजी म लिखा था—सिन्द्री फर्टिलाइजस सिन्द्री।

दिल्ली भी क्या वाहियात शहर है कि घर एक किनारे पर है तो दफ्तर बीस मील दूर दूसरे किनारे पर। बिना बस म बठ गुजर नहीं। एक दिन जो बस म घुसा तो बठने का स्थान न था। चुपचाप पीछे की ओर खडा हो गया और सपोर्टिंग राड को थाम हिचकोले खाता रहा। अगले ही स्टाप पर एक सज्जन भीतर घुसे। बस म चारों ओर नजर घुमाई और मुझसे बोले—'देखिये बठने की जगह तक नहीं है।

जी हा बिलकुल नहीं है मैंने उनकी बात का समथन करते हुए कहा।

'बिल्कुल नहीं है उन्होंने मुह बिचकाया मगर आपकी तो यह ड्यूटी है कि जो आपको टिकट दिखावे आप उस सीट दिलायें।

यो कहते कहते उन्होंने अपना टिकट निकाल कर मेरे सामने कर दिया। उत्तर म मैंने भी अपना टिकट उनके आगे कर दिया। मेरे टिकट को उन्होंने यो देखा जसे वह टिकट न हो साप का बच्चा हो। सकपकाते हुए बोले—

ओह सारी। मैं समझा था कि आप
बस के कण्डक्टर हैं!
ही ही ,
मगर मैं भी आप को कण्डक्टर समझू तो?
'ही ही

हीं ही क्या ?'

लेकिन मेरे मूछ कहा हैं ?"

तो क्या मूछ मान कडक्टर ?"

जी नही मूछ माने मूछ मस्टेच।"

फिर ?

'फिर क्या ?'

'मैं पूछता हूँ कि क्या मूछ रखने वाले कडक्टर ही होते हैं ?'

जी नही। मूछ के अलग अलग जगह अलग अलग माने होते हैं। रेवेन्यु म मूछ मान पटवारी पुलिस म मूछ मान थानेदार, आर्मी म मूछ मान मेजर और बम म मूछ माने

सर स्पतर पहुचे। भीनी वर्षा हो रही थी। दोपहर के तीन बजते बजते मौसम रंगीन हो गया। बाबू लोग काम पर से उखड गये और चार चार पाच पाच की मण्डलिया में एकत्र हो चाय चुसकने लगे। मेरी टेबल पर भी यही दृश्य था। जगन ने प्याला चुसियाते हुए कहा— डियर, बुरा न मानो तो एक बात कहू।

'जरूर कहो, मैंने मौज मे आ कर कहा।

'यार चीन से लडाई चल रही है। इमरजेन्सी का जमाना है। नेताओं के जोशील भाषण हो रहे हैं सो कभी कभी मुझे भी जोश आ जाता है। लेकिन, तुम रख रहे हो मरे तो मूछ है नही। ऐसी स्थिति मे अगर तुम्हारी मूछ पर हाथ फेर लिया करू तो कोई आपत्ति तो नही ?'

मैं जल भुन कर रह गया। फिर भी चेहरे पर कृत्रिम मुस्कान धारण कर ली। कुछ कहू इसके पहले ही जगन फिर बोल पडा—

बुरा मानने की जरूरत नही। हा इन मूछो की मेन्टनन्स पर जो खर्च आता हो उसका आधा मुझसे ले लिया करो।

तो तुम समझते हो मैंने ये किराये पर पाला रखी है ?

'किराये पर न सही 'सर्टिफिकेट सही प्लीज।

मैंने अपने क्रोध पर रिरियाना हुआ का दर्प शासन हुए यह प्रस्ताव मुझे मंजूर है। बस इतना पारदा कर दो कि तुम्हारा जान कर अवक्त दस बज आया करेगा कहीं कमबख्त आधी रात को ही आ जाय और तुम आ कर लगा मेरा द्वार खटखटाने। मैं उठकर दरवाजा खोलूं और तुम कह दो कि बस पर लिया हाथ वापस बन्द कर लो।'

बात किसी से कहने की नहीं। मैं स्वयं अब अपनी मूछों में आजिज आ गया था। एक शाम दफ्तर से छूटकर सीधा एक हेयर ड्रेसर के सलून में घुस गया। हांफता हुआ बोला इन्हें जल्दी से साफ कर दो।

नाई झिझका, बोला— खरियत तो है बाबू ?'

'जल्दी। मुझे वक्त नहीं है।'

नाई की छत्तीसवीं बुद्धि ने समझ लिया कि मैं सी० आय० डी० पुलिस का कोई अफसर हूं और कि वेश बदल कर जालसाजों के किसी गिरोह का पीछा करने को उतावला हूं। तभी शायद उस्तरा फेरने के बाद उसने पैसे तक न मांगे। मुझे यही संतोष था कि चलो फिर से इंसान बनने के लिये कुछ खर्च न करना पड़ा। ○

दाढ़ी की वकालत

○

मैं जब भी दाढ़ी वाले बाबा जी को देखता हूं तभी यह मानने को तयार हो जाता हूं कि, एक दाढ़ी हजार नियामत। दाढ़ी वाले बाबा बिना वजह हर जगह सभापति बना दिए जाते हैं और दाढ़ी वाले बाबा को करीब करीब बिना मांगे ही भिक्षा मिल जाती है। दाढ़ी वाले व्यक्ति के प्रति हमारे मन में भय मिश्रित आदर का भाव स्वतः ही उत्पन्न हो जाता है। इसे हम पुरानी चाल के आदमी पुराना संस्कार कहकर टाल सकते हैं किन्तु पढ़े लिखे लोग विलायत में चलने वाले नए फैशन को अमर करेंगे। परन्तु इतना अवश्य है कि दाढ़ी अगर असली हो तो इन्सान की असली उम्र के मामले में धोखे की गुंजाइश उतनी ही रहती है जितनी ईमानदारी एक असली नेता में पाई जाती है।

दुनिया के धक्के खाते हुए जब हमारे जन्मजात नाबालिग डिप्टी साहब को दुनिया की खबर होने लगी तब उन्होंने दाढ़ी बढ़ाने का अनुष्ठान साधन प्रारम्भ कर दिया। वह दावा करते थे कि लम्बी दाढ़ी वाला ठाठ से दाढ़ी पर हाथ फेरता है उगती हुई दाढ़ी वाला उस पर गौर से रेजर चलाता है और बिना दाढ़ी वाला बालक अपने पिता जी का गाविग ब्रुश अपने गालों पर फेरकर दाढ़ी वाला बन जाने की मधुर कल्पना करता है। डिप्टी साहब ने जब से सड़क पर चप्पल चटकाने वाले हुरिया को दाढ़ी

बढ़ाकर स्वामी हरिहरानंद की पदवी पर प्रतिष्ठित होते देखा, तब से तो वह दाढ़ी के पीछे एकदम दीवाने ही बन गए। उनकी यह सुनिश्चित मान्यता बन गई कि पाठ्य पुस्तक लम्ब कूर्चो मुख जैसे पाठ बालकों को पढ़ाकर दाढ़ी के विरुद्ध भले ही अनधिकृत प्रच्छन्न आंदोलन करती रहे परन्तु संसार की कोई भी शक्ति दाढ़ी का उगना और बढ़ना और इज्जत पाना नहीं रोक सकता है।

डिप्टी साहब ने दाढ़ी बढ़ाई और इस कालावधि में उन्हें अभिशप्त अज्ञातवास करना पड़ा। दाढ़ी तो बढ़ गई परन्तु उनकी इज्जत में इजाफा नहीं हुआ। वह डिप्टी साहब की जगह न तो डिप्टियानंद बन सके और न किसी ने उनको नाम बदलने का सुझाव ही दिया। इतना ही नहीं *इच्छा और सम्भावना के विरुद्ध उनके साथी उनका मजाक बनाने लगे तथा* मोहल्ले के छोटे बालक 'हौवा' कह कर उनसे डरने लगे। शुभ चिंतक पड़ोसियों ने उनकी दाढ़ी में भिक्षावृत्ति की झांकी देखी और पत्नी ने उसमें संन्यास आश्रम के दर्शन किए। केवल माता ने उनकी दाढ़ी में उनके उज्ज्वल भविष्य की आशा किरण देखी क्योंकि उसकी राय में डिप्टियों *का झुकाव अब पुरानी बातों की ओर होने लगा था।*

दाढ़ी के प्रति उचित आदर का अभाव डिप्टी साहब को कुछ अखर गया। उन्होंने सोचा घर का जोगी जोगना आन गांव का सिद्ध। क्यों न घर के बाहर निकल कर देखा जाय। बस अगले दिन ही प्रातःकाल कर स्वल्पाहार के पश्चात् रवाना हो गए। रेल में बड़ी ही भीड़ थी। किसी भी डिब्बे में घुसना पटवारीगिरी पाने के समान मुश्किल था। खैर सौ-सौ धक्के खाने के बाद वह एक डिब्बे के अन्दर दाखिल हो गए। अन्दर स्थिति यह थी कि पांव की तो बात ही क्या है—तिल रखने को भी जगह न था। उनको देखते ही एक यात्री ने डांटते हुए कहा 'ए बड़े मियां कहां घुसे आ रहे हो? चलो यहां से।' डिप्टी साहब का माथा ठनका हो

गया और उनके मु ँ पर हवाइया उडने लगीं । वह कुछ कहना ही चाहते थ, तब तक एक अ य यात्री न सहानुभूतिपूण स्वर म क ा—बुजुग आदमी है, कही न कहीं टिक ही जाएगा । डिप्टी साहब को अपन लिए बडे मिया और बुजुग श दो का प्रयाग बहुत ही अनुचित लगा परन्तु वह चुप ही रहे ।

खुदगर्जी ने जुबान पर यह नारा लगाया कि अभी तक खुनन म नही आ रहा है। उनकी समझ म अब य बात भी आन लगी है कि काका कालेलकर ने वाल्मीकि जी को ऋषि न लिखकर मौलवी वाल्मीकि क्या लिखा था।

एक बार डिप्टी साहब मुशायरे म पहुँच गए। डिप्टी साहब न भी च द न म अज की। चीज दिलचस्प थी। सुनन वालो न दिल खोल कर दाद दी। डिप्टी साहब न ज्या ही आदाब अज किया कि पीछ स जाग की आवाज आइ—'वल्लाह क्या बात है! यह सफेद दाढी और य नाजुक ख्याली ।

घर आकर डिप्टी साहब न सोचा कि क्या न दाढी का काला रग किया जाय। ख्याल आना था कि दिमाग म शायर क शेर न झटका दिया—मुँ भी करेंगे काला जो दाढी है स्याह की । बस, अब क्या था। डिप्टी साहब को अपनी दाढी स बहुत नफरत हान लगी। वह उसे काटन को दौडन लगी। उसकी वजह से उनक मुह की रौनक लुटा हुई सी दिखाई पडने लगी। वह सोचन लग कि दाढी चाह स्याह हो, चाह सफेद हर हालत मे बुरी है। इसी सिलसिले में सिक्खो की दाढी और बारह आने के टिकट पर अमतसर क स्वण मन्दिर की तस्वीर आदि न मालूम कितनी बातें उनके दिमाग में घूम गइ । वह सोचने लग कि दाढी तो हमार ऋषि मुनि भी रखा करते थे तब फिर उनके साथ बारह बजे वाली मसीबत क्या न थी? साथ ही ख्याल आया कि व अपन बालो को खुला हुआ रख कर उसमें

हमेशा खुली हवा देते रहते थे। इसी कारण शायद उनके बारह नहीं बजते होंगे?

डिप्टी साहब इसी उधेड़ बुन में थे कि उनके एक पुराने दोस्त कुंवर साहब आ गए। दुआ-सलाम के बाद मिजाज के बारे में पूछताछ हुई। कुंवर साहब ने पूछा क्यों भाई डिप्टी! क्या मामला है दुश्मनों की तबियत क्या कुछ नाराज है? कुंवर साहब का सवाल अभी अच्छी तरह ठण्डा भी नहीं होने पाया था कि डिप्टी साहब उबल पड़े और उछल कर अपनी दाढ़ी का दामन लिया। उनकी दाढ़ी के सिरे उनके पैरों के साथ कदम मिला कर कवायद करते हुए जान पड़ते थे। उनका कहना था कि वह अपनी दाढ़ी को साफ कर डालना चाहते हैं। परन्तु इतने दिनों के साथ ने उनके दिल में उसके लिए ऐसी मुहब्बत पैदा कर दी है। इसी कारण उनकी साँप छछूंदर वाली हालत हो रही है। दाढ़ा सचमुच गुड़ भरा हँसिया हो गई है। न निगलत बनती है न थूकते बनती है। अब आप ही बताए क्या किया जाय?

डिप्टी साहब की बात सुन कर कुंवर साहब पहले तो मुस्कराए और फिर तुरन्त ही गम्भीर होकर कहने लगे, 'देखो भाई! दाढ़ी मूछ भग वान् की बहुत बड़ी देन है यह मर्दानगी और तजुर्बेकारी की निशानी है। अविवाहित पुरुष की भांति दाढ़ी मूछ रहित आदमी को सदैव नाबालिग ही समझा जाता है। वह होटल के चाय या छोकरा की भांति दुनिया वालों के लिए हमेशा लड़का ही बना रहता है। न तो किसी मामले में उसकी राय पूछी जाती है और न किसी सभा में उसे सभापति ही बनाया जाता है। पुराने जमाने की मानाएं अपने बालकों को दाढ़ी वाल मूछ मुछारे के रूप में ही बड़ा देखना चाहती हैं और उन्हें पालने में झुलाते समय इसी तरह की लोरियां गाती थीं। अतएव जिनके दाढ़ी नहीं हैं अथवा जिन्होंने अभी तक दाढ़ी न बढ़ाई है उनकी बात तो छोड़िए, बस दाढ़ी वाले किसी शरीफ आदमी को शायद साफ करने की बात दिमाग में लाना तक नहीं चाहिए।

राज तो मुडवाए दा और ऊपर से लात हसाई हा—यह कौनसी और कहा की अक्लमदी है ? डिप्टी साहब न बात काटत हुए कहा कि कुवर साहब म तो अपन हाथ स हा अपनी हजामत बना दगा मुडवाई देन का सवाल ही कहा पदा होता है ? डिप्टी साहब की बात सुनकर कुवर साहब क ओठा पर एक हल्की सी मुस्कुराहट आ गई मानो वह उनकी नादानी पर भेदभरी हमा हम रह हा। वह कहन लग—देखिय डिप्टी साहब ! हजामत तो हमेशा दूसरे की बनाई जाती है। खर छोडिए इन बातो को। दाढी ता ससार क प्रत्यक देश म रखी जाती है। हर मजहब म उस इज्जत की नजर स देखा जाता है।

इस प्रकार वह विश्व बधुत्व पवित्र जीवन अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि कोण आदि का प्रतीक है। अगर दुनिया के सब लोग दाढी रखने लगें तो विश्व-युद्ध नि शस्त्रीकरण विश्व प्रेम अन्तराष्ट्रीयता आदि की समस्याए स्वत हल हो जायें। झगडे तो वहा होते हैं जहा दाढी मूछ की इज्जत नही होती। झगडा करने वालो क अगर आकडे इकट्ठे किए जाए तो आप देखेंगे कि झगडा करन वाल ९९ प्रतिशत व लोग होंगे जिनक दाढी मूछ नही हैं। आप ही बताइए—क्या आपन कभी किसी मूछ वाल को अपनी बात स हटते हुए तथा किसी दाढी वाल को दाढी का लिहाज न करते हुए देखा है ? आप यह सौ फी सदी सच मान सकते हैं कि आदमी न जिस दिन सबस पहल अपनी दाढी मूछ साफ की थी उसी दिन उसके भीतर बैठा हुआ मद बाहर चला गया था। शायद वह अभी तक दाढी मूछ के भीतर छिपी हुई मर्दानगी और इन्सानियत की खोज म इधर उधर भटकता फिर रहा है।

कुवर साहब की बातो के झूले म डिप्टी साहब नींद की ओर पग मापने लग। वह मन ही मन गुनगुना रहे थ—

मरे जीने क लिए मरन का सामा चाहिए।
याद आ ही जाएगा गहवारे जुम्बा चाहिए॥

वह बराबर सोच रहे थे कि प्रथम पंक्ति में किसी तरह यह भाव आ जाय कि मेरी इज्जत के लिए दाढ़ी सफाचट चाहिए। कुंवर साहब ने उनके मन की बात पकड़ ली। तुरन्त बोले — भाई दाढ़ी को छोटा बड़ा मन हो कर लो। इसकी तो कई किस्म होती है —

एक दाढ़ी मान मनव्वर एक दाढ़ा दुक्रा।
एक दाढ़ी फाग फजीते एक दाढ़ी भब्बो॥

आप इन में किसी को भी चुन लें परन्तु दाढ़ी को सफाचट करने की बात को दिमाग में भी न आने दें। पर जनाब डिप्टी साहब भी कोई यों ही डिप्टी साहब नहीं बन गए थे। कुंवर साहब ने यदि तीन बच्चों के पिता बनने के बाद रोजी-रोजगार की फिक्र शुरू की थी तो डिप्टी साहब ने इस ओर अभी तक तवज्जह ही नहीं दी है। तुरन्त ही नहले पर दहला लगाते हुए उन्होंने बीरबल का वह किस्सा सुना डाला जिसमें मियां जी की दाढ़ी के बालों को घास समझ कर भूखे घोड़े ने उन्हें नाच डाला था।

कुंवर साहब चुप हो गए थे परन्तु उनके दिमाग में यह बात बराबर इधर उधर चक्कर लगा रही थी कि इस तरह की गैर जिम्मेदारी की बातें करते समय डिप्टी साहब को कम से कम अपनी दाढ़ी का ख्याल तो करना ही था। और कुछ नहीं कम से कम इनकी दाढ़ी के बाल बच्चों का डर दूर करने वाले ताबीजों में भरने के काम तो आ ही सकते हैं।

बर्दाश्त की भी हद होती है। कुंवर साहब से न रहा गया। उन्होंने दाढ़ी की खूबियां बताते हुए फारस के बादशाह की यह कहानी सुना ही डाली जिसमें बादशाह के वजीर ने हिन्दुस्तान के मशहूर फल आम की तारीफ को फिजूल बताते हुए बादशाह सलामत से अर्ज किया था कि वह शहद में डूबी हुई घनी-लम्बी दाढ़ी को चूम कर देखें उनको आम का मजा आ जाएगा।

कुंवर साहब का तीर निशान पर लगा उनकी तकरीर लाजवाब

साबित हुई ।

जद्दोजहद से बचने के लिए और अपने दिलोदिमाग को राहत बख्शने के ख्याल से डिप्टी साहब ने यही ज्यादा मुनासिब समझा कि यह मामला एक इन्क्वायरी कमेटी के सुपुर्द कर दिया जाय।

उद्घाटन की रस्म अन्जामगी न हो सकने के कारण वह कमेटी अभी तक अपना काम शुरू नहीं कर सकी है। परन्तु खुदाई फौजदारों को चैन कहां मिलता है। वे खुद-ब-खुद गवाही देने पहुंच गए हैं। उनके जितने मुंह हैं, उनसे ड्योढ़ी बातें हैं। उनका कहना है कि अगर दाढ़ी का लोप हो गया तो खरी कहने वाले दाढ़ी झाड़ अपनी जबान की खुजली मिटाने के लिए कहां जाया करेंगे? और फिर दाढ़ी साफ कर देने से दाढ़ी से पैदा होने वाली बुराइयां तो दूर हो न जाएगी। आप मुंह पर उगने वाली दाढ़ी का उड़ा भी दें तो इससे होता क्या है? आप पेट के भीतर उगने वाली दाढ़ी का क्या करेंगे। दुनिया के तजुर्बे और जीवन के धक्के आपको बताएंगे कि जीवन में वे ही व्यक्ति सफल होते हैं जिनके पेट में लम्बी दाढ़ी होती है। आत्म निरीक्षण द्वारा आप अपने पेट में उगने वाली दाढ़ी का परीक्षण कीजिए और बताइए कि हम पहले कौनसी दाढ़ी की ओर ध्यान देना चाहिए—मुंह की अथवा पेट की, क्योंकि अब तो औरतें भी इस दिशा में पुरुषों की बराबरी करने के लिए निकल पड़ी हैं। ○

मेरा गान्धीवाद

○

जैसे गीता के श्लोकों का अर्थ कुछ विद्वान भिन्न भिन्न प्रकार से खींच तानकर अपने अनुकूल लगा लेते हैं, उसी प्रकार मैंने गांधीवाद को अपने लिए फिट कर लिया है। मैंने इसका अध्ययन बाल्यकाल से ही आरम्भ कर दिया था और उसी का यह परिणाम है कि मेरी भाषा, चाल, व्यक्तित्व और मुखाकृति से गांधीवाद ऐसे टपकता है, जैसे वर्षा में टूटी छत।

सूत कातना मैंने बचपन से ही आरम्भ कर दिया था। पहले तो मैं मोटा कातता था किन्तु अभ्यास करते करते २० नम्बर तक पहुंच गया और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो आप विश्वास करें या न करें १२० नम्बर तक कातने की योग्यता मैंने प्राप्त कर ली है।

मैं प्रायः खादी पहनता हूं। 'प्रायः' शब्द का अर्थ आप और कुछ न समझ लें अतः इसका स्पष्टीकरण भी किए देता हूं। कांग्रेस के प्रतिज्ञापत्र में 'आदतन खादी पहनता हूं' के स्थान पर मैंने 'प्रायः तन खादी पहनता हूं' कर दिया था। इस तनिक से संशोधन पर किसी ने ध्यान भी नहीं दिया और मैं सदस्य बना लिया गया। इन दो अक्षरों के परिवर्तन से लाभ उठा कर गांधीवाद के खुले गगन में एक स्पूतनिक की भांति उड़ान लगाता रहता हूं।

हेडनूम मेरी उसी प्रकार सहायता करता है, जैसे पत्र लिखने में पेन और मलेरिया में कुनैन। मेरे व्यक्तित्व और परिधान की धाक को देखकर किसी का साहस नहीं होता कि मेरे कोट का हुल्लम और थाना का मिनमड सिद्ध कर सके।

अहिंसा पालन में भी मैं सदा अग्रगण्य रहा हूँ। डी० डी० टी० का प्रयोग कभी नहीं करता। चूहे, खटमल, मक्खी और मच्छर मेरे घर में उतनी ही स्वतन्त्रता से विचरते हैं जैसे मध्यप्रदेश में डाकू। परोपकारी जीवन बिताता हूँ। दिन रात में केवल छः बार खाता हूँ, महीने में एक दिन नहाता हूँ, स्नानोपरान्त छह माशे चीनी और एक तोला आटा मिलाकर चींटियों को चटाता हूँ। यद्यपि इस सदाव्रत में मेरे दो पैसे व्यय हो जाते हैं तथापि इसकी मुझे तनिक भी चिंता नहीं क्योंकि यह धन-दौलत है ही क्या माया-पाश! धन की तीन ही गति हैं—दान, भोग और नाश।

सत्य के सन्दर्भ में मेरा विनम्र निवेदन है कि मैं सत्य का प्रयोग प्रतिदिन करता हूँ। यद्यपि इनकम टैक्स, सेल्स टैक्स, दुकान के ग्राहक तथा अपनी पत्नी के सामने कभी-कभी मीठी बातें बनानी पड़ती हैं जिनके द्वारा मेरे धन और तन की रक्षा होने में सहायता मिलती है क्योंकि इस उपाय से मेरी अहिंसा को बल मिलता है अतः उसे मैं असत्य की श्रेणी में नहीं मानता।

मेरे मित्र मुझे त्याग की साक्षात् प्रतिमा बताया करते हैं। असली घी मैंने त्याग दिया है, वनस्पति खाता हूँ और त्याग के तराने गाता हूँ।

अब रह गई सहनशीलता या अक्रोध, जो गान्धीवाद का एक मुख्य अंग है। क्रोध को मैंने जीत लिया है। तकाजे वाले प्रायः मेरा अपमान कर जाते हैं और मैं शान्तिपूर्वक नेत्र बन्द करके उस अपमान को उसी प्रकार पी जाता हूँ जैसे मीरा ने विष का प्याला पी लिया था। यह दूसरी बात है कि अपने हृदय की खुजली मिटाने के लिए मन ही मन उन्हें कुछ गालियाँ दे लेता हूँ इससे उन्हें कुछ कष्ट नहीं होता और अपना हृदय पवित्र हो जाता है।

भावी कहानीकार

○

बी० ए० पास करने के बाद सालभर नौकरी की खोज में कुछ रकम रेलवे को कुछ डाक विभाग को मैंने पुरस्कार में दिये। तब से परमात्मा जप में देखता और गप से आनन्द मिल जाने की सम्भावना है परन्तु नौकरी न जप तप अथवा गप में भी नहीं मिलती। मजनूं को लैला नहीं मिली फरहाद का शीरीं से मिलाप न हुआ। उन्हीं का शाप यह पड़ा कि कामची सखी से युवकों का नौकरी से भेंट नहीं। मगर करना तो कुछ चाहिये था। बेकारों का एकमात्र सहारा बिना पूंजी का व्यवसाय नाम कमाने का सबसे सरल उपाय अपने बड़ों को गाली देने का आसान तरीका साहित्य सेवा है। इसके लिए कुछ पढ़ने की भी आवश्यकता नहीं है। तुलसी और सूर किस विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट थे। बिहारी और केशव के पास कौन सी डिग्री था। शेक्सपियर किस गुरुकुल के विद्यालंकार थे। उमर खय्याम कौन काशी के साहित्याचार्य थे। इतने बड़े बड़े साहित्यकार संसार में पैदा हुए और अमर साहित्य छोड़कर मर गये तब फिर साहित्यकारों में पठन पाठन की अस्वाभाविक क्रिया की क्या आवश्यकता! मैंने जब इस बात पर पूर्णतः विचार किया तब सोचा कि अभी तक की अवस्था मैंने मूर्खता के सागर में डुबा दी। इतने दिनों जीवन व्यर्थ नष्ट किया और आर्यावर्त इसका हिन्दी का लेखक बन गया।

मैंन दसवें दर्जे तक हिन्दी पढी थी। मेरा ऐसा विचार है और बहुत ऊचा विचार है कि हिन्दी लेखक होने के लिए इतनी हि न्दी पढ लेना पर्याप्त है। और न्दी मे पढना ही क्या है! फिर जो कुछ भी, उस मौलिक लेखक क्या पढ और मैं मौलिक साहित्यकार बनना चाहता था। एक जिस्ता कागज और बारह आने की एक जापानी फाउटन पन लेकर एक चौकी पर बैठ गया और लेखक बन गया। आध घन्टे सिर पर हाथ और हाथ में कलम रखकर सोचता रहा कि क्या लिखू। हिन्दी साहित्य दो वस्तुओ के लिए विख्यात है कविता और कहानी। लिखना तो दानो का ही सरल है परन्तु यह सुन रखा था कि कहानी लिखन म पस मिलते हैं। या तो कवि-सम्मेलन होन पर मार्ग व्यय म स कविया को भी कुछ बच ही रहता है दूसरे भाडा मिलने पर तीसरे दर्जे म महात्मा गाधी की दुहाई लेकर चलने से आधे आध की बचत तो हो जानी है पर तु कवि सम्मेलन तो साल मे पाच ही छ बार होते हैं और कहानी की माग वियोगी के आसू के समान निरन्तर जारी रहती है। मैंन भी कहानी ही लिखने की ठानी। बैठे-बैठे बहुत साचा, परन्तु कोई प्लाट ध्यान म नही आया। मेरे नगर मे एक विख्यात लखक थ। मैंन उनस सलाह लेना उचित समझा। उन्होन कहा — 'सबसे सुन्दर कहानी वह होती है जो स्वाभाविक होती है। लोगो को देखिये भालिये उनके जीवन चरित को जानिये उसी पर कहानी लिख डालिये।'

मुझे क्या पता था कि कहानी लिखना इतना सरल है। नाहक उनका एहसान लिया। सध्या समय लोगो क जीवन निरीक्षण का विचार किया और यह भी निश्चय किया कि लोगो स उनकी जीवन-सम्बन्धी घटनाओ को पूछूगा। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन म रोमास और प्रेमालाप एव वियोग तथा मिलन सभी होते हैं। बनारस क ऐसा और नगर कहा मिलगा ऐसी बातों के लिए।

जाडे की सध्या थी। नौ बजे क समय काशी के चौक म कुछ

मसाला हाथ लगता है । इस ही समय में भविष्य का साहित्यकार कहानी के प्लाट की खोज में निकला । कोलम्बस हिन्दुस्तान की खोज में इस उत्साह से न निकला होगा न मेगस्थनीज और ह्वेनसांग भारत में इस जोश से निकले होंगे । चौक की चौमुहानी के पास चार पुरुष एक साथ चले जा रहे थे । मैंने उनमें से एक को कहते सुना — गुरु रखा गया हाथी साहित्य । मैंने समझा कहानी का रोमांटिक प्लाट अवश्य ही इनसे मिलेगा । मैं उनके पीछे हो लिया । यह सोचा कि इन लोगों की बात सुनकर आगे चलकर इनसे बात करूँगा । वे लोग पान की दुकान पर खड़े होकर पान खाने लगे । मैं भी दूर पर खड़ा होकर इनकी ओर देखता रहा । जब वे वहाँ से चले तब मैं फिर पीछे चला । मालूम होता है उन लोगों ने जान लिया कि मैं उनका पीछा कर रहा हूँ । एक ने धीरे से कहा — जासूस है । दूसरे ने कहा — सी० आई० डी० है । तीसरे ने कहा — चलो उस गली में चलें और इसे पीटा जाय ।

जितनी भी अभिलाषा साहित्यकार बनने की हो मगर मार खाकर कहानी लेखक बनना मुझे अभीष्ट न था । धीरे से खिसक गया जैसे बुद्धिमान पुलिस का हेडकान्स्टेबुल झगड़े लड़ाई के समय किया करता है परन्तु कहानी लिखना था अवश्य और जीवन की घटनाओं के आधार पर । मैं हिम्मत हारने वाला था नहीं आगे बढ़ा । और मैंने सोचा कि साहस से काम लेना चाहिये । सन्तोष को तिलांजलि देकर ही लोग बड़े आदमी बनते हैं ।

घूमते घूमते मैं आगे एक चौमुहानी पर पहुँच गया । वहाँ देखा कि एक सज्जन तांगे से उतरे । उनकी अवस्था चालीस वर्ष की रही होगी । उनके साथ एक बीस साल की युवती भी थी   बड़ी हँसमुख । मन सोचा इनसे मिलना चाहिये । वर्तमान संसार के साहसी पुरुषों का नाम मन में लिया । हिटलर का नाम आते आते सारा संकोच जापानी सेंट की महक के समान गायब हो गया । मैं उनके सामने जाकर खड़ा हो गया । उन्होंने मेरी

ग्रोर देखा, मैंने उनको प्रणाम किया। उन्होंने भी जवाब दिया। मगर बडे रूखेपन से। मैंने कहा — कहिये? मेरे हृदय में तो एक क्षण सचालन शक्ति ने बायकाट कर लिया। फिर भी हंसी को किसी प्रकार मुख पर लाकर बोला — हें हें हें आप कहां जायेंगे?" इस बार उक्त महाशय का स्वर और भी कडवा हो गया। पहले यदि लोहा था तो इस बार वज्र। बोले — क्यों? क्यों का तो मेरे पर ऐसा प्रभाव पडा जैसे सेशन जज ने फांसी की सजा सुनाई हो। मेरे मस्तिष्क की शक्ति भारतीय एकता की तरह गायब होने लगी। मुझे क्या पता था कि संसार में लोग उजड्ड भी होते हैं। मगर बनना जा रहा था साहित्यकार। फिर साहित्यकार और अपमान तो आप में पर्यायवाची शब्द हैं। मैंने बडे ताव के साथ कहा — मैं साहित्यकार हूं। इस बात पर उनकी आवाज और तेज हो गई। यदि संगीत की भांति क्रोध में भी स्वरों का आरोह अवरोह होता है तो वह क्रोध का निषाद था। उन्होंने अंग्रेजी में कहा ह्वाट। एक तो क्रोध दूसरे अंग्रेजी में। जैसे तिरछी आंखों में बरौनी का सुरमा। सारी अक्ल अन्तर्धान हो गयी। बुद्धि के वियोग से मेरी जो अवस्था हुई उसका फल यह हुआ कि ह्वाट का उत्तर देने के स्थान पर अनायास बिना प्रयास बिना सोचे जो महिला इनके साथ थी उसकी ओर हाथ करके मेरे मुख से निकल पडा — यह कौन है?

महिला, महाब्राह्मण और मक्खन की महत्ता मैं समझता हूं और पाठकों को विश्वास दिलाता हूं कि मेरा अभिप्राय किसी प्रकार का अनादर का भाव प्रदर्शित करने का नहीं था। बिगडना चाहिये था मुझको मगर उपयुक्त सज्जन ने मेरे छोटे से प्रश्न सूचक वाक्य को सुनकर ऐसी मुद्रा बनाई मानो उनको मिरगी रोग से घनिष्ठ सम्बन्ध हो। मुंह बनाने के साथ ही उन्होंने पुकारा — कान्स्टेबल! जैसे लखलखा सुंघाने से चन्द्रकान्ता में ऐयार होश में आ जाते थे उसी प्रकार कान्स्टेबल शब्द ने मेरी चैतन्य शक्ति जाग्रत कर दी। इसके पहले कि मैं कुछ और कहूं चौमुहानी का कान्स्टेबल मेरे पास आ गया और उस व्यक्ति ने क्या कहा यह तो मैं सुन न सका, केवल पागल शब्द मेरे

थाना में प्रवेश कर गया और मेरे पैर टेस करने लगे। कांस्टेबल के पांव के शब्द मेरे पीछे पट पट बोलते थे और उन्हीं के साथ मेरा हृदय भी धड़ धड़ ताल दे रहा था। मैं सच कहता हूं कि यदि मुझे लोग इन्हीं की घुड़दौड़ में ले गये होते तो भागना था के पीछे से मैं भाग निकल गया होता। मैं एक अंधेरी गली में भागा और इस ढंग से कि कभी वह इधर भी न आया हो जो पहला मकान दिखाई पड़ा उसी में घुस गया।

जिस अशुभ घड़ी में मैं घर से निकला था वह नहीं सकता। ज्यों ही घर के भीतर पैर रखा कि किवाड़ बन्द करने के लिए कोई ऊपर से उतरा। मुझे देखते ही वह चिल्लाया—चोर! चोर!! बाहर जाता हूं तो पागल भीतर चोर परन्तु घर के भीतर चोर बन कर मार खाने की अपेक्षा अपने पांव की तेजी की परीक्षा को मैंने अधिक लाभदायक समझा।

'चोर चोर!' की आवाज ने लोगों को चौकन्ना कर दिया। वे मेरे पीछे दौड़े मैं भागता जाता था और अपनी शक्ति भर चिल्लाता जाता था कि मैं चोर नहीं कहानी लेखक बनने वाला हूं। शायद उन लोगों ने सुन लिया। पांच मिनट के बाद अकेले मैं ही दौड़ता गया। उस दिन पता चला कि कहानी-लेखक के लिए दौड़ का अभ्यास भी आवश्यक है। ○

शिकार की तलाश

○

सुरेश भाई नाटे हैं पर इतने नहीं कि सेना में भरती न हो सकें। रुझान उनका मुटापे की ओर है पर बन्दूक का प्रयोग करने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होती। उमर अभी बीस के इस ओर ही है इसलिए उनकी मुसकान में बचपन है और आप जानते हैं, बचपन बुद्धि के मामले में भले ही अविकसित हो पर प्यार के मामले में बड़ा विकसित होता है। सो सब मिल कर वे बड़े प्यारे लगते हैं।

लेकिन प्यार का एकमात्र कारण उनका यह रूप ही हो, सो बात नहीं। और भी बहुत सी बातें थीं—मसलन उनकी मेरी रिश्तेदारी। मेरे ससुर के साले की ससुराल से वह आये थे और उन्हें शिकार की तलाश थी। मेरे साले साहब इंजीनियर थे और ऐसी जगह काम करते थे जहां जंगल और दरिया दोनों थे। इस दोहरे आकर्षण के कारण सुरेश भाई के मुंह में जो पानी आया यदि आप शिकारी हैं तो उसकी कल्पना करके अपने मुंह में भी पानी आ सकता है। जंगल में साभर आदि तो थे ही उन दिनों वनराज शेर के आने की सूचना भी मिली थी और नदी में मगर इतने थे कि उनकी खाला से तम्बू तयार कर लो।

मेरे साले साहब के स्वभाव में एक खास बात है कि जो नाते

रि तेवाने या दोस्त लोग उनसे मिलने आते हैं उन्हें बन्दूक भर बताते हैं। इस पर सुरेन भाई तो शिकारी थे और सात सागर के शिकार प्रेम की कहानी तो दूर दूर तक मशहूर है। जमाने पर से शेर के मारने की बात छोड़ भी दें तो भी उन्होंने अपने अफसरों की शोहरत के लिए कई बार मगर मार मारकर लिए हैं।

तो साहब तय हुआ कि सुरेन भाई के सम्मान में शिकार यात्रा की जाय। विशेषकर इसलिए भी कि सुरेन भाई शीघ्र ही सेना में भरती होकर दूर जाने वाले थे। मौसम बड़ा प्यारा था। शिकार की थकान तो कम होती ही है उलटे शरीर में गर्मी भी आती है। शिकार की मस्ती में सुन्दर अवसर देख कर मेरे मुह में भी पानी भर आया और यात्री दल ने दर्शक के तौर पर मुझ खद्दरधारी अहिंसक को भी साथ ले जाना स्वीकार कर लिया। बस बहुत से लोग गाधी टोपी को ३०३ (एक प्रसिद्ध राइफल) तो कहते हैं पर यकीन मानिए मैं जीव हत्या के मामले में बुद्ध महावीर और गाधी का शिष्य हूँ। मैं तो लेखक के नाते ही उस दल में शामिल हुआ।

बहरहाल हम यात्रा पर निकले और अंतिम समय पर मेरे साले के साले साहब भी एक्स्ट्रा के रूप में उस दल में शामिल हो गये। बस उन्हें रमी (ताश का एक खेल) खेलने का बड़ा शौक है और उस यात्रा में कहीं भी—जंगल में मोटर में खाने की मेज पर खाने के समय नदी के किनारे—जहा भी मौका मिला हो वे मेरे साले के साले मेरे ससुर के साले के साथ रमी खेलते रहे। इस प्रकार मुझे दो दो लाभ हुए—शिकार के साथ रमी भी देखी और ऊपर से मुफ्त में रसगुल्ले खाए वे अलग क्योंकि शर्त यह थी उस यात्रा में जो भी जितने रुपए जीतेगा उनके रसगुल्ले खाए जाएगे।

लीजिए शिकार की बात करने चले थे जा पहुचे रसगुल्लों

पर । ठहरा न खद्दर की टोपी पहननेवाला अहिंसक ! माफ कीजिए अब गलती न होगी। सबसे पहले टीम का वर्णन कर । मेरे अतिरिक्त उसमें मेरे साले साहब थे और मेरे ससुर के साले के भतीजे सुरेश भाई थे। इस टीम के मैनेजर कहिए या मजबान कहिए मेरे साले साहब थे । शिकारियों में प्रमुख थे सुरेश भाई और उनके सहायक थे मेरे ससुर के साले। मेरे साले के साले रिजर्व में थे और मैं दर्शक था हो ।

बहुत सी कच्ची पक्की सड़कों की धूल फांकते हुए नदी-नाले पीछे छोडते हुए जब घने जंगल के बीच में होकर हम नदी के किनारे पड़े इंजीनियर साहब के कैम्प की ओर बढ़ रहे थे तब रात भी चुपके चुपके हमारा पीछा कर रही थी । मेरे ससुर के और साले के साले साहब रमी में व्यस्त थे लेकिन शाबाश सुरेश भाई ! वह बन्दूक सम्हाले जंगल की ओर टकटकी लगाए देख रहे थे ।

एकाएक वह चिल्ला उठे— भाई साहब ! उधर देखिए ।

सबकी दृष्टि भी उसी दिशा में उठी और घने जंगल के पेड़ लता गुल्मों में उलझकर रह गई ।

सुरेश भाई ने कहा— साभर है।'

'कहां ?'

वह देखो वह खड़ा पेड़ के पास !

स्टेशन वैगन तब तक धीमा पड चुकी थी और सुरेश भाई बन्दूक का निशाना साध ही रहे थे कि इंजीनियर साहब ने वैगन आगे बढ़ा दी और कहा— इतनी देर साभर आपकी गोली का इंतजार नहीं कर सकता जनाब ! आपने पेड़ के ठूंठ तने को देख लिया है ।'

सुरेश भाई ने बहुतेरा विरोध किया लेकिन साहब कोई माने तब न ! बेचारों का शकुन खराब हो गया। इसलिए अगली बार जब

सांभर जंगल में गायब होने से पहले काफी दूर तक दौड़ता हुआ दिखाई दिया तब उन्होंने बंदूक नहीं चलाई। हो सकता है कोई भूत सांभर का वेष बनाकर आ गया हो।

बहरहाल कैंप में पहुँचने पर हमने वह रात तम्बुओं में गुज़ारी। सवेरे जल्दी से जल्दी उठकर मगरदाह पर मगर का शिकार करने की बात थी। लेकिन रात का देर तक बन्दूकों की जांच करने और जंगल की ठिठुरती सर्दी के कारण शिकार पार्टी देर तक सोती रही। सरेन भाई जब हड़बड़ाकर उठे तब चारों ओर शोर मच रहा था। एक बार तो वह समझे कि कहीं हांका पड़ रहा है पर शीघ्र ही पता लगा कि भाभीजी चाय का प्रबन्ध कर रही हैं नौकर नदी किनारे भोजन बनाने का सामान बांध रहे हैं साथ दो आदमियों को मगरों का पता लगाने के लिए नीचे की ओर जाने को कह रहे हैं। हमें उठा देखकर वह बोले—'जनाब! क्या किया जाय देर हो गई। अगर कैसा अच्छा मौका था! मगर इस समय धूप सेंकने किनारे पर लेटने के लिए चल पड़ होंगे, लेकिन जब तक हम वहां पहुँचेंगे वे लौटने की तैयारी में होंगे।

जंगल के उस उबड़ खाबड़ रास्ते को कुछ कार से कुछ पैदल पार कर नदी पर पहुंचते पहुंचते सचमुच ग्यारह बज गए और जो दो आदमी मगरों का पता लगाने आगे थे उनमें से एक ने आकर रिपोर्ट दी— साहब मगर तो कहीं नहीं हैं।

साहब ने परेशान होकर कहा — क्या बकते हो? कहां गए?"

जो जान पड़ता है वे और भी नीचे चल गए। उस डाटकर साहब ने कहा— तो जहां गए हैं वहां उन्हें लाओ। यहां हमने कितने ही मगरों को मारा है। मेहमान क्या कहेंगे?

वह आदमी चला गया और हम लोग पार्टियों में बंटकर नदी के कगार पर पथरीले किनारों के साथ इधर-उधर फैल गए। भाभीजी

नौकरो को लेकर खान का प्रबन्ध कर रही थी और बच्चे मुझ दशाश्व के साथ इधर उधर फुदक रहे थे। मगर कही दिखाई नही दिए। इजीनियर साहब के बच्चे जो अक्सर मगर के शिकार के साक्षी रहे हैं मुझे अपनी अटपटी भाषा में अपनी कहानी सुनाने लगे। काफी देर पत्थरो पर दौड-दौड कर मैं थकावट महसूस कर रहा था इसलिए वे कहानिया मेरे लिए काफी स्वास्थ्यवर्धक साबित हुई। मगर मगर को मरते देखने की चाह ने मुझे फिर भी एक स्थान पर नही बैठने दिया। कभी मैं सुरेश भाई के पीछे भागता कभी इजीनियर साहब की पार्टी की ओर। तभी माहब मैंने बन्दूक छूटने की आवाज सुनी। सारा वन प्रान्त एक बारगी उस ठहाके से गूज उठा और तेजी से इजीनियर साहब की ओर भागा। बच्चे भी दौडे। वे चिल्ला रहे थे—'अहा मगर मर गया!' मैंने देखा—दूर ऊपर की ओर वे लोग जोर-जोर से बातकर कुछ कह रहे थे। मैंने चिल्लाकर कहा— क्या मगर मर गया?

गानी मामाजी ने बताई थी बात— गाली तो लगी है।'

'क्या मतलब?

मगर वहा उस छोटे से टापू पर पडा था गाली खाकर वह उछला और दह में घुस गया।

तो?'

'तो क्या अब वह जीते जी अपने आप ऊपर नही आएगा। उसे बुलाना पडेगा।

लेकिन उसे बुलाने के लिए सारे प्रयत्न विफल गए। पानी के नीचे अपनी दह के किसी अस्पताल में वह सुरक्षित था। हमारा आक्रमण उस किले को न तोड सका और इजीनियर साहब को विश्वास हो गया कि अब तो मगर मरने के बाद ही ऊपर आएगा। उसमे कई

थे। उनके पास बन्दूकें थीं और वे बार-बार रोशनी फेंक रहे थे। बीच की सीट पर कम्बल ओढ़ मैं शान से राजा बना बैठा था और नीचे की तरफ बैठे थे इंजीनियर साहब जो शेर और सांभर के स्थान पर सीट के शिकार में अधिक दिलचस्पी दिखा रहे थे। ड्राइवर की बगल में एक भाई माग-दर्शन के लिए भी बैठे।

रात अंधेरी थी। चारों ओर सन्नाटा था। रास्ता बुरा नहीं था। सन्नाटे और अन्धकार पर प्रहार करती हुई जीप इस तरह मन्थर गति से आगे बढ़ रही थी जिस प्रकार कोई जहाज समुद्र में से गुजर जाए। पेड़-पौधे एक बार चमकते और फिर अन्धकार में खो जाते। दूर-दूर तक कुत्तों के भूकने तक की आवाज न सुनाई देती। बस अपनी ही जीप का शोर कानों को भरता रहा था। बीच में सुरेश भाई बोल उठते थे— 'वह ... वह देखो ...!'

सचलाइट इधर उधर घूमती पर जंगल में वही कोई जुम्बिश नहीं होती।

सुना आज तो शेर आया हुआ है।

सुना तो है।'

दिखाई नहीं देता।

शेर तो क्या यहां तो गीदड़ भी नहीं है।

वे तो शेर के डर से छिप गए हैं।

और शेर आपके डर से!

सब लोग हंस पड़े। बाप रे शेर रहते ऐसा सन्नाटा! जंगल में कोहराम मच जाना चाहिए लेकिन यहां तो गहरे अन्धकार में निपट पेड़ पौधों के झुण्ड मिट्टी के टीले और पत्थरों के अतिरिक्त और कुछ न दिखाई देता था। किसी सांभर और हिरण का नज़र तो क्या आवाज तक नहीं

सुनाई देती थी। हा जीप की रोशनी में नाचनेवाला परिन्दा बार-बार हवा में तैरता हुआ सामने आ जाता।

सुरेश भाई ने उतावले बनकर पूछा— आखिर आज ये कहा गए ? कोई भी दिखाई नही देता।"

मामाजी बोले— दें कम ? तुमने पहले तो सूचना दी नहीं।

इजीनियर साहब जैसे नीद के झोंके से जाग हो— कह मामाजो वे घर के अन्दर सो रहे हैं, सर्दी है न ! क्या बचारा को जगाते हो ?

इसके के बाद फिर एक गहरा मौन व्याप्त हो गया। एक बार फिर हमने उस घने जगल का चक्कर काटा। नदी के किनारे आ निकले। सामने कुछ भोपड़िया दिखाई दी जैसे कोई बड़ा जानवर बैठा हो। सुरेश भाई ने जस्त ली पर शीघ्र ही मायूसी मे हाथ पीछे हट गया। मुह से निकला— धत् तेरे की !'

मैंने कहा—'सुरेश भाई दुनाली को भुकाओ मत। रोशनी में नाचने वाली इस चिड़िया को ही मार डालो।

बोले—'जी म आता है इसे ही चबा जाऊ। कम्बख्त खरगोश तक नहीं दिखाई दिया।

सुरेश भाई बहद निराश हुए उन्हे कोई शिकार नहीं मिला। जरा क्रोधी स्वभाव के होते तो निश्चय ही तब वह पडो को भून देते। निराश मैं भी था मेरी कहानी रह गई लेकिन सबसे अधिक निराशा तो डेरे पर पहुचकर हुई। भाभी जी ने सब कथा सुनकर कहा—'आप लोग फिजूल उधर हैरान हुए साभर तो यहां आया था।

सच ! —हम लोग अचरज से चिल्ला उठे।

मामाजी ने कहा— सुरेश भाई को पूछना होगा।

भाभाजी बोली—'हां पूछ रहा था और यह भी कहता था कि आज तो हम उनके सामने आ ही नहीं सकते थे।

क्यों?

क्योंकि पार्टी में एक भाई अहिंसा के उपासक हैं। उनके रहते हिंसा कैसे हो सकती है!

अब क्या था एक साथ सब की दृष्टि मुझ पर पड़ी। इंजीनियर साहब बोले— ओहो तो यह बात थी! मैं भी कहूं नदी के आर के पार मगर, जंगल के सारे जानवर और वह नया शेर—ये सब कहां चले गए?"

'भाई बड़े समझदार हो गए हैं जानवर। अपने राजा का कितना ख्याल करते हैं।

वैसे अगर आज सामन्तवाद का युग होता तो इसमें कोई शक नहीं सुरेश भाई मुझे ही गोली का निशाना बनाते, लेकिन तब तो यही हुआ कि वह हंसकर रह गए।

चलते समय इंजीनियर साहब ने सुरेश भाई को फिर आने का निमंत्रण दिया और मुझे सांभर की खाल का एक जोड़ी जूता बनवा कर भेंट किया।

पाठकों से प्रार्थना है कि वे इस भेंट का कोई विशेष अर्थ न लगाएं और लोफर शब्द का अर्थ ढूंढने में भी सिर न खपाएं।

× × ×

पुनश्च

कहानी लिखकर चुका ही था कि सामने एक चुहिया दिखाई दी।

बद न्नि म उमम परगान था। बस हैंडबग उठाकर मार ही ता दिया। निशाना एसा अचक बठा कि चुहिया वही ढर हो गई। फिर तो बच्चो न घर मिर पर उटा लिया—"अहा पिताजी न चुहिया का गिकार किया! अहा ताऊजी न चुहिया मार डाला!

मैंने गव से भरकर एक बार अपने अहिंसक (?) गिकार को दखा और साचन लगा—क्या न इस चुहिया की खाल का वृक्ष बनवाकर अपने साले साहब को भेंट किया जाय?

क्या? यह यदि आप मुझे सुझा सकें ता बडी कृपा हो। ○

जीवन का जुलूस



मधुपुर का छोटा सा रेल्वे स्टेशन, साँझ की अंतिम किरणें काले पत्थर वाले स्टेशन पर छाये बोगनवेलिया में झर रही थी।

प्लेटफार्म आज सुनसान था। मैं और मौसी ही अकेले यात्री इस स्थान से चलने वाले थे। दो तीन वृद्धा आत्मीयाएँ पहुँचाने आयी थीं। मौसी और मैं अपने शहर से यहाँ ननिहाल में किसी मृत्यु शोक के अवसर पर आये थे। कुल का दीपक बुझ गया था—एक तेईस वर्ष के जवान लड़के की मौत हो गई थी। शादी के नौवें ही महीने एक पन्द्रह वर्ष की सुहागिनी बाला का अहिवात उतर गया था। सो विदा वेला में उसी का करुण उपसंहार चल रहा था। ममत्व माया, बिछोह, देश काल की दूरियाँ मर्त्य मानव की बेबसियों की वही कथा।

सामने की समाधि-सी शून्य पहाड़ी पर एक झाड़ की ओट से सूरज का बादामी बिम्ब डूब रहा था। तब गाड़ी आ गई। हम दो ही यात्री थे सो सवार हो गये। चार पाँच मिनट गाड़ी ठहरी, मैं और मौसी अब खिड़की पर थे। नीचे वे विधवा आत्मीयाएँ अपनी सीमाओं में बन्द खामोश खड़ी थीं हम परस्पर एक दूसरे को ताकते रह गये और गाड़ी ने सीटी दे दी।

और उनमे बड़े मनुष्यों की परछाइयां उनमें पड़ रही हैं। एक के बाद एक वक्ष अंधेरे में निकलते जाते हैं। जीवन के कई मुस-दुख के द्वारों में हम भटक गये। अपनी विफलताओं मजबूरियां परिस्थितियां दिन काल की सीमा बद्धताओं में हम चिंताकुल हो रहे थे। जाने कितना जो अपना जीवन बीत चुका है उस पर सहानुभूति और करुणा की दृष्टि थी। और भविष्य की अनिश्चितताओं में मैं अभिभूत हो चला।

अपने दुख में मनुष्य कितना अकेला है ? यह क्या इसीलिए नहीं कि मनुष्य को दुख में मोह है। अगर अपने सब दुख को प्यार करने की, उसे अपनाने की कमजोरी ही हट जाये तो अकेलापन ही क्या रहे ? तब निखिल जीवन जगत् अपने से बाहर की चीज कहां रह जायगा ?

और बाहर के जीवित चञ्चल वतमान में हम सहयात्रियों के चेहरों से जान पहचान करने लगे थे। तब जाने कब अनायास मौसी ने अपनी पुरानी गाथा छेड़ दी। वे सब सोहाग के मदमाते दिन जाने कहां चले गये ? उनके पति तब बम्बई के शिवरी कॉटन एक्सचेंज में रुई के दलाल थे। पांच सात सौ महीने की आमदनी थी। सांताक्रूज का वह जुहू रोड वाला बंगला और उसकी पोच में वह जापानी अंगूरी बिजली की लालटेन मुझे याद आ आई। हर शनिवार नाटक सिनेमा की सैर उड़ती। नये से नये डिजाइनों और मोडलों की वेश भूषा, सिंगार पाउडर-सेंट लवडर। टाल्कम की मीठी मोहक महक से भरी जीवन की वे खुशबूदार, साफियानी सन्ध्याएं ऐसी स्वप्न की रंगीन स्वच्छन्द रातें।

और एकाएक मानो अनेक बत्तियां और फानूस से भरे हुए विशाल भवन में दीप सारे गुल हो गए। आज मौसी की जवानी ढल रही है। उम्र उनकी करीब पतीस छत्तीस की होगी और मौसा शायद चालीस बयालीस के होंगे। उनके संतानविहीन जीवन में एक

गारण, अवमान उदासीनता है। पर गमन दम्पति के बीच सतत वत्ना की मोमबत्ती सी जल रही है। उनको जोड़ने वाला कोई जीवन सूत्र उनके पास नहीं है। मौसी प्रोरा के बच्चों को लाकर उन पर अपने लाड प्यार उडेलती हैं उन्हें नहलाती हैं कन सवारती हैं अपने पास से नये कपड़े पहनाकर मिठाई देती हैं। और या अपने तरस भरे हृदय की विफल पीड़ा को चुपचाप अपने घर के एकाकीपन में अपनी छाती में दफनाती व चल रही हैं। बम्बई में भारी वजदारी होने से उनके पति का काम फल हो गया था। इसी से वे इस छोटे शहर में आकर बस गये थे। आज उनके पति निधन हैं—एक नई जान के मामूली दलाल—एक मिल ननर। मौसी के कमरे में पुराने दिनों के दो एक फर्नीचर अब भी जीवन की विफल महत्वाकांक्षाओं का मजार बने से दिखाई पड़ते हैं।

और बात करते करते मौसी ने बहुत दूर बाहर के गहन अंधकार में टकी जलती आग पर निगाह ठहरा दी। मानो उनकी आंखों में छत उतर आया था। उस समय वे अपने अनिश्चित और आश्रय अवलम्बहीन भविष्य की दुश्चिन्ता में व्याकुल हो उठी थीं। तभी बात करते करते वे अचानक रुक गई थीं और बाहर के अंधकार में ताकने लगी थीं। ठीक उसी क्षण मेरे भीतर का तरुण, कामनाओं की आकाश धरा पर भूमता हुआ अपने भावी जीवन के रोमानी सपने बुन रहा था।

मौसी के चेहरे को दृष्टि गड़ाकर मैंने गौर से देखा, रूखे केशों के बीच कुम्हलाये, रंजीदा मुख पर मत्य मानव के चिर असंतोष की दुखान्त कहानी मैं पढ़ गया। मेरा नाम विज्ञान विचार दर्शन पल भर को जैसे शून्यवत् होकर उस चेहरे के किनारे ताकता खड़ा रह गया। देखते देखते भावी के आसमान पर चल रही वह मेरे जीवन की चित्र नीला विलीन हो गई। एक गहरे असंतोष और अभाव के शून्य में जीवन—मानो इच्छा उमंगों से तरंगाकुल है। किनारे पर सभी ओर परिणाम में एक विफलता है निराशा है व्यथता है। यह कैसी पराजय

है जीवन मात्र की—कभी अन्तहीन करुणा ।

और डिब्बे में आस पास अनेक स्पन्दन व ऊंचा नीची श्रेणी के मुसाफिर बैठे हैं। अनेक जीवनों की धाराएं यहां आकर मिली हैं—इस गतिमान रेल के डिब्बे में। अपनी ही धुरी पर घूम रही धरती को यह रेल मानों चारों ओर से परिरम्भण में भर लेने को उतावली हो उठी है। यानी धरती की गति पर रेल का शासन है—और इनका वाहक सचालक है मनुष्य ! और उसी मनुष्य का यह बकरी ? नहीं यह झूठ है यह गलत है यह प्रमाद है यह भ्रम है। यह मात्र मनुष्य का एक दुर्बल मोह है। दुख से मन लिपटा हुआ है अपने हर क्षण का वह स्वामी नहीं है। बीतते हुए क्षण की विफलता का पश्चात्ताप और भावी जीवन की इच्छाओं की मरीचिका—इसी का नाम है क्या मनुष्य का जीवन ?

दूर पर जंगल व बहुत से मिणगलों की पाल माला हरी बस्तियां दिखाई देने लगी थी। वनस्पति और जगली फूलों की सुगन्ध से भरी ठण्डी हवा में मेरा मन झूमने लगा था। ऊपर दीप्त तारों से भरे तरल धाराओं में मुझे अपने भावों की नौका, विजय के पथ पर अग्रसर दिखाई पड़ी। मैं उत्साहित हो उठा। और मुसाफिरों की भी सुस्ती उड़ी। एक स्फूर्ति और चंचलता सब में दिखाई देने लगी।

लो यह स्टेशन आ गया। स्टेशन के विशाल हाल की ऊंची ऊंची दीवारों पर बड़े बड़े हण्डों में बत्तियां जल रही हैं। यहां वहां टंगे हुए नये से नये कला प्रकार से विभिन्न विज्ञापनों व पोस्टर जीवन की नित नवीन प्रगति का आप स्वामी है वह सक्षम है और अनन्त शक्तियों का धनी है। मेरे सारे सपने कल्पनाएं जीवन के एक विद्युत सत्य के आवेग से फिर खिंच आये। व सपने विहाल मेरे रक्त में कर्म की अनेक उत्तेजित बहुरूपिणी धाराओं में लहरा उठे।

पान बीडी माचिस' 'पूडी मिठाई गरम । मुसाफिरो के चलन चलन का कोलाहल बाजार बटार वृद्ध-तरुण रूप कुरूप वर्ण वर्ण विविध अनेक चेहरे अनेक वेश भूषाए माहकता-कुरूपताए ! मौसी जान कब निःश्वास छोडकर अपने दुःख को भूल गई थी । उनके रजीदा चेहरे पर भी एक मुस्कराहट थी और अपनी सजल आखो मे एक ममतामय प्रसन्नता भर कर वे मुझ से बोली— हा रे नीटू आज सारा चलन की व्यग्रता मे तूने कुछ खाया नही ला अब खा ले । टिफिन निकाल कर खाना लगाती हू—कुछ नमकीन मीठा जावर ले आ—'

वानर की तरह इस चञ्चल मन मे मैं उठ बैठा । दोनो बर्थों पर अपने लिए और मौसी के लिए बिस्तरे बिछा दिए और कूजा थामता जा पहुचा हलवाई की दूकान पर । आवश्यक चीजें ले ली मौसी के लिये कुल्हड में दूध और थोडे से फल लेता आया—जिसमें से अधिकाश मेरे पल्ले पड़ने का मुझे पूरा भरोसा था । व्हीलर के स्टाल पर जा पहुचा । हरिजन की ताजा कापी और पेंगविन सीरीज मे से एच० जी० वेल्स का यू वाड आटर खरीद लिया । एक मस्त और स्वच्छन्दता मेरे साथ भी लिए थे मैं उनसे बात करने की उतावली ले उठा था । डिब्बे मे पहुच कर एक बचन खुशी से जल्दी जल्दी मैं बहुत सा खाना खा गया और हरिजन लेकर पढ़ने बैठने को प्रस्तुत हुआ ही था कि बहुत सी भीड एकाएक डिब्बे में आ गई । गाडी का यहा एक घण्टे का विश्राम है और इधर कोई नई गाडी आने से यह मुसाफिरो की आमद शुरू हुई थी ।

आशा से अधिक गर्मी डिब्बे में होने लगी । उस किनारे दरवाजों के पास बैठे यात्री नवागतो को रोकते थे और आने वाले जबरदस्ती अपना सामान ठूस रहे थे । बिस्तर ट्रक स्त्रिया बच्चे कुली भीषण सघर्ष कोहराम कोलाहल मच गया । इस बीच अनेक साधु आवारा और भिखमगो के दल भी बिना टिकिट भीतर घुस आये । उन लोगो ने फर्श पर रास्ते में ही डेरा जमाया । नतीजा यह कि जाने का मार्ग भी रुद्ध हो गया । कुछ भद्र

जना न इस अनपेक्षित साथे आ पड़े मनुष्यों को बहुत कड़ आँखों उनकारा घबरे भी थे। पर वे तो सड़क के पत्थरों की तरह अपनी जगह गड़ गये थे और टस से मस होने का नाम भी नहीं ले रहे थे। सारी टोकरों के प्रति वे सदा प्रस्तुत थे।

इस बीच कुछ सभ्य शिक्षित व्यापारी तथा चुस्त दुरुस्त दुनियादार लोगों ने अपनी सुख सुविधा को अधिक से अधिक विस्तार कर अपना जाल करने की सोची। एक पुरात परिचय के अधेड़ गुजराती सज्जन ने मुझे टोका। सद्भावना से दो मीठी और नम्र बात उनसे की तो उन्होंने मेरे जरा उठते ही खिसकाव खिड़की के पास मेरे बिस्तर पर अपना आसन जमा लिया। मेरे आने पर खिड़की का सहारा ले हम कर मुझ से बात करने लगे। मेरे तकिये की गिलाफ पर कसीदे से काढ़े हुए बातों का ताज पहन गहू टपकते चेहरे वाले ऐसा दे 'पुरी' टोपी चित्र को देख उन्होंने प्रसन्नता प्रकट की और उसके किसी का परिचय जानने को वे उत्सुक हुए। घनिष्ठ प्रसन्नता प्रकट कर अकाल बहू को उन्होंने आशीर्वाद दिया। और यों अपनी समझ में घनिष्ठता के स्निग्ध मक्खन पर मुझे फुसला कर उन्होंने अपने रात भर सोने का इन्तजाम साध लिया। जब जान गया हूँ कि ठगा जा रहा हूँ और जान बूझ कर ही अपने को ठगा जाने दिया है तो दुःख क्यों होगा। पर सामने वाले के अपने बुद्धि चातुरी के विजय गर्व पर मुझे एक बड़ी ही तरस भरी हँसी आती है और व्यंग्य भी अनुभव होता है। आस पास के सभी मजहार कुशल मुसाफिरों के अपने सुख-सुविधा पैदा करने के उपाय पर बड़ी देर तक मुझे अनेक मजाक सूझते रहे। बड़ी तेजी से एक जीवित कहानी का अनुक्रम मेरे सामने खुलता जा रहा था। कई स्केचों सुझावों और टाइपों की सामग्री स्मिति के दराजों में जमा हो गई। अपने वर्ग पर धक्कम धुक्का करते मुसाफिरों की अपनी भद्रता की मर्यादा में सिमटा रहा बदरकारी में दम्भता मैं न रहा सका सो अपने बिस्तरे की जगह का भी उनके साथ

वग लिया । मत और स्वप्नग्प्टा की शिलायें प॒ उमक पहने ही जीवा की यह गोर भरी विनाश मर दिमाग पर आकर बरस पडी । चाहू या न चाहू वन पढन का इस क्षण मैं आध्य था ।

और गाडा न सीगी द नी । तभी फाटक खालकर काली कमरी ओढे नाथ म तम्बूरा लिए, एक काना मा मूरदास अन्दर घुस आया । आक्र ताडना भक्र और गालिया की बौछार क बीच भी वह भीतर घसता ही चला आया । आखिर गाडी का खुला दरवाजा भी एक मुसाफिर न गार शीक कर लगा ना तो लिया । पर वह ही म फश पर छाए पडे अनगिनत आवारों के बीच फस कर सूरदास भी खिडकी के पास ही खड़ा रह गया । इधर स भद्र जग उम पर घणा और तिरस्कार की झिडकिया बरसा रहा है गाली गलौज द रहा है तो उधर व उधक रा म बठ पशु मानव जसकी टागा म घस मार मार कर चिमटिया ले लेकर उस खा डालना चाहत हैं । पर सूरदास शून्य की आर आखें टिमकारता हुआ खामोश हस रहा है । कुछ देर ता वह लाठी टक पत्थर की तरह अडिग खड़ा रहा । फिर कुछ टुकुर बुर कर उन प्रहार करती गालियो और लातन हुए लगा के बीच वह नीच धसकर बठन लगा—अपन उन चवर मजातीय बधुओं म । बद त मी प्रताडनाए और आघात उस पर एक बारगी ही बरस पडे । पर वह सब अभ्यस्त भाव से सहन कर रहा था । कभी अपन कपाल म बहुत स मन डाल कर वह कुछ दुबका दता । नहीं ता एक खामाश ठूठ की भानि वह उन प्रहारा के बाच फसा हुआ था । उन निमम शून्य निविकार अधा आखो म बहुत सा कीचड और पानी बह आया है । आपका मन दया स कातर भले ही हो आया हो पर सूरदास की वे आखें रुद्ध थी आत्मस्थ थी और निता त भावहीन थी । जो भी व आखें रुदन करती सी लग रही थीं पर व ता रुदन का अचल चित्र बन गई थी । उनके पीछे कोई हृदय की आतता या रोना धोना नहीं था । वग

तो मृत्यु की अभेद्य बर्फानी शीतलता थी, निर्द्वन्द्व शान्ति थी। ऊपर से लगता है जैसे इस मिट्टी के ढेर के भीतर एक अकरुण, निर्गुण, अविकल्प निष्काम शून्यता है। पर देखो न यह ऐसा सूरदास भी सब कुछ सहन करता हुआ एक अटल सत्याग्रही की तरह जीवन के लिए, अपनी हस्ती के लिए लड़ रहा है।

और भटकते भटकते बंध के पास आकर वह एक मुसाफिर से बोला—'बाबा, तनक सरक जाओ, हाथ लगाय देव तो हमहुँ को जरा ऊपर बैठाय लेओ।

मुसाफिर को सूरदास के इस दुस्साहस और ढीठता पर बड़ा क्रोध आया। पर देखकर अंधे को जब उसने दो चार फटकारें दीं तो सूरदास और भी अपने औद्धत्य से आगे बढ़ा और अधिकार के कड़े स्वर में बोला— इतना गुस्सा काहे को करता है बाबा? गाड़ी तेरे बाप की है?— तू भी बैठा और हम नहीं बैठेंगे? गाड़ी सरकार की है, गवर्नमेंट सरकार की है या भगवान की है। तू बैठा है तो हमारे को भी बैठने देना पड़ेगा। तू मुसाफिर है तो हम भी मुसाफिर हैं। दुनिया एक सराय है— आखिर यहाँ कौन है? घर किसका? ठहरने को कौन आया है सभी को एक दिन जाना है।

सूरदास तो अपनी मस्तानी चाल रहे थे और ऊपर चढ़े आ रहे थे कि उस मुसाफिर ने फिर ताव में आकर उसे जोर से ठेल दिया। वह पीछे गिरते गिरते बचा। नीचे के उसके साथियों ने अपने निर्दय धक्कों पर उसे सम्भाला। फिर एक बार कटु शब्द-बाणों के प्रहार उस पर हुए और तड़-तड़ाते हुए उसकी पतली लकड़ी-सी काली टाँगों पर पड़ने लगे। सूरदास अपनी कमली में से किनारी निकाल कर गाने लगा—

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये सबके दाता राम॥

तुलसी या संसार में, भांति भांति के लोग ।
सबसो हिलमिल चालिए नदी नाव संजोग ।।

दुर्बल को न सताइये जाकी मोटी हाय ।
मुई खाल की सांस सों लोह भसम हुई जाय ।।

चारों ओर खामोशी छा गई थी । और सूरदास चुप होकर बाहर ताक रहा । सामने गम्भीर सूरत बनाये एक मुसलमान सज्जन बैठे थे— उन्होंने सूरदास को अपने पास बिठा लिया । नीचे के उन तीन मानवों को बड़ा ईर्ष्या हुई पर उनका कोई वश न चला । सूरदास जब इत्मीनान से निरापद होकर बैठ गये तो अनेक ऊटपटांग प्रवचन उपदेश करने लगे क्या दृष्टांत सुनाने लगे और बीच बीच में एकाध दोहा गा देते । मानो उनकी अंधी आंखों के बाहर जितने ये मनुष्य प्राणी उनके आस पास बैठे हैं वे सब उनकी दृष्टि में निरे मूर्ख हैं और इन सबके बीच एक वही परम ज्ञानी हैं । सूरदास की उपदेश धारा चल रही है—

बाबा अहंकार बुरी बलाय है । मान के पहाड़ पर चढ़ कर मिट्टी का पुतला इतराता है । राख का बगूला देखते देखते उठ जायगा । यह संसार महा असार है । यहां साथी-सगा कोई नहीं । सब स्वारथ के सगा हैं । माटी से उठा है सो एक दिन माटी में मिल जाता है—इसका क्या गरब कीजे । खाली हाथ आया है और खाली हाथ जायगा —

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार ।
मरना सबको एक दिन अपनी अपनी बार ।।

दाम बिना निरधन दुखी, तृष्णा वश धनवान ।
कौन सुखी संसार में, सब जग देखा छान ।।

फिर क्या तेरा और क्या मेरा ? अरे हां बाबा हमको नहीं बैठन देगा—और हम पर गुस्सा करता है । हम तो भगवान के हुक्म से

चलत हैं—तुझे हमको चढन लगा पड़गा। नहीं चढते लगा तो भगवान हमको अपने सिर पर बिठावेगा। देखो, उठ या कि नहीं हरि के जन ने ।'

कोई पूछ बठा कहा स आ रहे हो सूरदास ?

अरे भगवान् श्रीनाथ जी के दरसन करके लौट रहे हैं। उनका हुकम आया है सो मथुरा-वृन्दावन म मनमोहनलाल जी के दरसन करके, प्रसाद पाय के वहां स हरद्वार जायेंगे फिर आगे हुकम हुआ तो बद्री केदार। रामाजी के एकलिंग देव का बड बड लाड्डू का महाप्रसाद पाय कर हमारी आतमा बडी तिरपत होय गयी है। और श्री नाथजी की लीला का क्या बखान कर बड भोग लागे और मा.न थाल के बडी आरती पूजा भई अतुल भण्डार भर हैं भगवान न प्रसन्न होय कर हमको बहुत धन माल द दिया है ।

और तुझे हुए आप काल चेहरे पर सफेद दाता की पक्ति दिखा वह हो हो कर हस दिया। फिर गाने लगा —

ऊधो मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
हस सुता की सुन्दर कगरी औ कुञ्जन की छा ी॥

आस पास कुछ लोग अपन सुख सुभीत का सरजाम करके भोजन पर जुटे थ और साथ ही सूरदास की बातों का आनन्द भी लते जा रहे थ। खाने की आवाज और गध से अनुमान लगाकर सूरदास बोल— बाबा सब लोग भोजन करत हो पर अकेले और हमारा कल्याण नहीं करोग तो कैसे चलगा ? भगवद् क जन को भोजन कराय के प्रसाद का पुण्य लूटो बाबा। बड भाग तुम्हार जो बिन बुलाये ही हरि के जन का भोग लग को पाय गय

एक तिलकधारी पगडीधारी वैष्णवजन बड इतमीनान स बहुत-सी

जगह घेर कर एक उज्ज्वल बदिया विस्तर म बठे भोजन कर रहे थे। भोजन ममाप्त होने ही तुरन्त उन्होने वची हुई पूरिया तरकारी लड्डू दही एव छाडो म इकट्टा कर सूरदास को दे दिय । भोजन की इहलौकिक तृप्ति और ऊपर स दान की पारलौकिक तृप्ति का डकार भी एक साथ ही लेकर बघणव पान लगान का आयोजन करने लग । आस-पास के मुसाफिरो में भी उन्होंने पान-सुपारी इलायची बाटे । तब तक सूरदास अपना भोजन समाप्त कर चुके थे और दबढिया उठा कर बाहर फेंक दी थी। अपने ताँबे के लोट में किमी स मागकर पानी भी पी लिया था । पानों की भीनी भीनी मन्क हवा की लहर में सूघ कर सूरदास बोले—

'अरे हरि के जनो पान का भाग सब कर रहे हो क्या हमें पान नही खवाओगे ?—जय हो भगवद् क जना की—लाओ भाई पान देओ हमको भी—

सूरदास ने पान तो लिया ही ऊपर से इलायची तमाखू लौंग आदि का भी तीन बार माग कर सेवन किया। अब लोगों का खासा मनोरजन हो रहा था। सूरदास की इस ढीठ, वाचाल भिक्षुता और बुभुक्षा पर सभी हस रह थ कोई उपहास से कोई घृणा से कोई रंजित होकर।

इतन में पास ही एक सज्जन बीडा पीने लगे थे। धूम्र की मादक गध को नाक में दबाकर खींचते हुए सूरदास बोल उठे—

'अरे कोई माई का लाल हमें बीडी का दान नही करेगा ? सूरदास भी बीडी का भोग करेंगे—भगवान का हुक्म हुआ ह।

बीडी भी मिल गई। समझदार दुनियादार सहयात्री हैरत म थे कि यह सूरदास कितना उद्दण्ड दुर्विनीत और दुरन्त भिखारी है मोहताजी जरा नहीं दिखाता घिघियाकर नही मागता, फिर भी पा जाता है। वह तो अधिकार के स्वर म मागता है, एक जन्म-सिद्ध आधिपत्य का निरभिमान निर्बोध भान उसम सतत् जागरूक है । वह तो भोग-युग म जीन वाले

मानजो की तरह कल्पवृक्ष से जैसा मनोवांछित फल पा रहा है। बिना भांति या अकुलाहट के निर्बाध कहीं भी घुस जाता है माना वह नहीं देख पाता है इसी से मार्ग में बाधा कोई मानकर चलना ही नहीं। चारों ओर के प्रहारों और आघातों के बीच स्थित निरंजन आंखों को इधर उधर घुमाते टिमकारते हुए वह सब कुछ सह लेता है। पागल की तरह वह अकारण निष्प्रयोजन मुस्कराता रहता है। अपने गोलमटोल चेचक के दागों से भरे कृष्णवर्ण भरे गम्भू से चेहरे पर एक फलदार मफलर टोपी वह पहने है। कपाल में चन्दन की खौर पर गोरधन नाथ का तिलक लगा है। बगल बन्दी पर चौड़े पाट की एक पगड़ी है और उस पर एक बगली में किंगरी दबाये है। दूसरे कन्धे पर एक झोली पड़ी है। काल लाहे की कुरी किटी चमकती रागों में कोई चिमटी भरता है कोई दात गड़ाता है और सूरदास एक विचित्र सिसकी मुस्कराहट से गुनगुनाता हुआ राग में तानता है। बीड़ी का कश जोर से खींच कर धुआं उगलते हुए उसने हुंस दिया और बोला—

आज न टी नहीं छनी है और न ही दम ही लगाया है सब सूखा ही बीत रहा था। लेकिन देखो नसी राव सजाव सो जजमानो से भेंट होय गई। हरि जनों का सत्संग हो गया। मा भोजन पान भी हुए।

और भीतर ही भीतर प्रसन्न सूरदास मन ही मन मुस्कराते जाते हैं। अचानक किंगरी बजाकर वे गाने लगे—

कंचन का पिंजड़ा तोड़ चलो मेरे हंसा

गदन उठाये निर्वेन्नोन्मुख प्रसन्न मुद्रा में वह गा रहा है और आंखों से निर्विकार पानी गाजडा में से निकला जा रहा है। गले की नसें खिंचती जाती हैं और आलाप बढ़ता ही जाता है। रुदन और उल्लास दोनों उस स्वर में विभेद होकर समरस होकर डूब गये हैं। आस पास बैठे यार दोस्त हंस कर कहने लगे। चारों ओर हंसी अट्टहास फब्बार कोलाहल से दिशा गूंज उठा। सूरदास का मुंह एक सकरुण मुस्कराहट से फटा रहे

गया, और अखण्ड सास आलाप खीच कर वह गाता ही चला गया। बीच बीच म हिचकी और कम्पन म आवाज डूब डूब कर फिर उठती। रुदन की गम्भीर वापिका म स उठ रहा अतर क आल्हाद का जैसा स्वर हो। जाने कैसी विमूढ व्यथा मे समस्त प्राण को वह उद्विग्न और व्यग्र कर रहा है।

तभी कही से दो चार आरामतलब फैशनेबल छोकरो ने चिल्लाकर कहा—

'चुप भी रहेगा बे गधे की तरह बसुरा रेंक रहा है—घटा भर हो गया—खोपडी चाट गया—चुप चुप बे चुप।

और भी कुछ ताने कशिया घृणा हुस्न और गालियो की बौछार ज्यो ज्यो चारो ओर की रोक और तिरस्कार बढ रहा था, सूरदास क स्वर की आल्हाद वेदना तीव्र स तीव्रतर हो रही थी। और बहते बहते वह बुक्का फाडकर गा उठा। प्रलय के समुद्र का गर्जन जस उसक स्वर म समा गया हो और एक अनन्त आलाप तान स वह गाता ही चला गया। धीरे धीरे स्वर डूबने लगा और उसे हिचकियां आने लगी। और वह एकाएक घूम स चक्कर खाकर नीचे गिरा। गिरना था कि नीचे वालो ने आड हाथो लिया। दो चार लात घूसे उसकी पसलियो पर पड। तब बडी जोर की खासी उसे आई। खासते खासत दो चार उबाल आय और तभी खिडकी म से मुह निकाल कर उसने बड जोर से क कर दी। आसपास फस वे मानव जन्तु बुरी तरह बिगडकर शोर मचाने लगे।

तिलक पगडीधारी वष्णव ने 'हरे कृष्ण हरे राम' कहकर अपना विस्तृत बिस्तर समेटा और उत्कट असह्य ग्लानि म आखें मूदते हुए मुह फेर कर वे बिस्तरे म दुबक गय। मेरे गुजराती बुजुर्ग जो कभी म खर्राटे खींच रहे थे जाग उठे और अगडाइ भरते हुए बडबडाय—

अभी तो देखते देखते म कितना खा गया है साला बडा नाभीडा है माना खाधडा! नरक का कीडा—कितना खाना है—सबका

ल लेकर जाने कितना रो गया। वह पपया मू गफली अटमट कोई [साब है साला—अब मरा, साले को उलटी हुई-हेकनी स्तन म वे फ गनेबल छाकरे चिल्लाये— अरे कानरा पदा करेगा साला मरदूद अगले स्टेशन पर इसे निकाल बाहर करो।'

गरम रजाई क सुख में लिपटे वैष्णव जो सब मुह ढककर सो गय थ रजाई के भीतर ही से बोले— हा हा साहेब, बराबर निकालो सारे पाजी को नही तो बिना मौत मर जाने की दशा है।

सूरदास लाचार था खड़ा नही रह पा रहा था। सो धम्म स बैठ गया। ठुस्स द देकर लोगो ने उसे फिर खड़ा किया। बमुश्किल तमाम थरथरात पैरो वह खड़ा हो गया। दो तीन आदमियो ने उठकर जबरदस्ती खिड़की स बाहर उसका मुह ठूस दिया। बाहर की गदन लटकाये वह बडी देर तक खाँ खा कर थूकता रहा। उसके कोने में स लोटा निकालकर मैंने थाडा सा पानी अपने लोटे म म उसक लोटे म डालकर उसे थमा दिया।

'अच्छा अच्छा तू कौन है भगवद्‌जन ' कहकर मेरे मुह म मरा हाल टटोलने लगा ?

अपनी जगह स ही मैं बोला—

'कुल्ला कर लो बाबा—जी अच्छा हो जाएगा।'

अच्छा भगवन् तेरा हुकम—

मुह धरकर उसने कुल्ला कर लिया। अब सब अपने अपने बिछौनो म गरम हो ठाठ किये रह थ और विश्राम तल की सोच रहे थ। सर्दी बढ़ती जा रही थी और सूरदास खड़ा खड़ा ठिठुर रहा था। टटोलता हुआ वह आगे बढ़ा और एक बच का सिरहाना पकड़कर वह उसके सिरे पर टिकने लगा। एक रतनामी पगड़ाधारी सेठ वहां बैठे थे—

वे चौंक कर ऐसे देखते रह गये जैसे पकड़ाई में आ गये हों। सूरदास को ठगने का साहस वे नहीं कर सके और अपराधी की तरह भयभीन घबड़ाहट से मुंह बिचकाकर रह गये। छटपटाये तो बहुत पर बोल उनका फूटता ही नहीं। सेठ की उम्र ३५ से कम होगी।

गहरे गहरे पान से उनके ओंठ सियाह हो रहे थे। बढ़िया रेशमी कपड़ों में से हिना महक रहा था। ललाट पर बारीक सी एक बिंदिया दे लगाये थे। शौकीन मिजाज आदमी मालूम होते थे। अपने चारों ओर अच्छी तरह लपेटकर एक कम्बल और उस पर एक रजाई उन्होंने उस तरफ बढ़ा दी थी सो उनके उस ओर सोई एक स्त्री ने उसे ओढ़ लिया था।

आये थे तब निगाह से इन यात्रियों ने मैंने भी देखा था। स्त्री एक स्वस्थ सुगठित शरीर की लम्बी पूर्णांग सुन्दरी युवती थी। बढ़िया काली छींट का एक एड़ी चूमता लहंगा बिना कलप टूटा नया मोतियापोत का लुगड़ा जिसमें चौड़ा चौड़ा गोटा लगा था। नये कराये माथा चोटी में गांठ से गूंथ कर गाड़ी गई पट्टियों के बीच सोने का मेपली बोर झूल रहा था। बिंदिया से शोभित सोहागिनी का यौवनदीप्त चेहरा जिसमें लावण्य के गुलाबी भंवर पड़ रहे थे। लगता था कि कोई बटी पीहर से ससुराल चली है। गोरे गोरे हाथों में और पगतलियों में बड़ी मेहनत से बारीक मेंहदी रचाई गई है—जो सियाह पड़कर और भी मोहक हो गई है। कलाई में गहने और पावों में छनछनाते हुए चादी के अखले-नवरी और बिछुए। जब आई थी तो छम छम करती हुई बड़ी देर तक सारे आबाल-वृद्ध सभी मुसाफिरों की दृष्टि और मन का केन्द्र बनी रही। जाने कब वह वय की पीठ की ओर मुंह फेरकर सो गई थी पीठ पर पड़ी गोटे में गुंथी चोटी लुगड़े के महीन पोत में से दीख रही थी, अब एक दुशाले से ढांक दी गई थी।

और पायताने की तरफ बैठे ये सज्जन उसके पति ही तो होंगे। जितनी स्वतन्त्रता, सम्पन्नता और गम्भीरता से उस स्त्री के साथ बैठे थे, उसमें कल्पना करने की गुंजाइश भी नहीं थी कि ये सज्जन उस स्त्री के पति के सिवा और भी कोई हो सकते हैं। पर इसी बीच उन्होंने उस लड़की से पूछा—

बाईजी साब, पानी पियोगी बाई? बिना मुँह फेरे ही लड़की ने सिर हिला दिया। तब तो समझ में आया कि यह तो कोई पास का सगा है—शायद कुटुम्बी। कि उसी स्टेशन पर आने वाले दो मुसाफिर फुसफुसा रहे थे।

ये ये ... तो कलकत्ते सेठ की लड़की है—उनके गुमाश्ते ससुराल पहुँचाने जा रहे हैं।

सोचा शायद भाई होंगे—लेकिन ये जो बैठे हैं ... जिस तरह बैठे हैं? हाँ शायद सुरक्षा की जिम्मेदारी है लेकिन यह सब जरूरी है। उस युवती को उन्होंने अच्छी तरह सुला दिया है और पैरों के पास बैठकर रात भर उन्हें पहरा देते हुए निकाला है। आप तकलीफ उठा लेंगे लेकिन बाईजी साहेब को तो आराम देना ही होगा। और फिर पहरा देना तो जरूरी है—जमाना खराब है—लुच्चाई और लफंगई बहुत बढ़ गई है। सो बेंच की पीठ के हत्थे पर गर्दन लटकाये वे अधमुँदी आँखों से ऊँघ रहे हैं लेकिन दूर पास के लोगों की दृष्टियाँ और कान एकाग्र सतर्क वहीं अटके हैं ।

बुड्ढे गुजराती ने आँख मारकर हँस दिया मेरी तरफ। मौसी भी जाग रही थी घोर ग्लानि और लज्जा से मुँह फेरकर उन्होंने ऊपर से कम्बल ओढ़ लिया।

सेठ के पास ही बैठा सूरदास, खाँसी कर कहता है—और

व्सस मेठ के ग्रानन्द मे ग्ग ग्याघात पहुच ग्गा है। इम बीच हिम्मत करक दो चार बार उठाने उस फन्वाग है—यन्गा है पर वह कम्बख्न सरके तब न। कील की तरन्ठ ठुक कर वह बैठ गया है। गुमाश्ताजी के मुख की मारी मिठास विरम हो गई। उसम जाने कैसा कमनापन ग्रा गया है। सब ग्रार स विन्यस्त निद्व द्व ग्रवटक अपने मुख में निमग्न मेठ ग्रन्ने मूरन्गाम मे मानों भयभीत ग्रौर त्रस्त हा उठे। सूरन्गास जस प्रत की तरह किलकारियां मारता हुग्रा खामोग ग्राखो मे व्यग कर रहा था।

उठेगा कि नही साले उठ उठ उठ बदमाग गुण्ड उठाइगीर कहीं क क ते हुए गुमाश्ताजी उसे हटाने को सन्नद्ध होकर खड हो गय।

इतनी देर ग्ग गई भली तरह कहते—एक नहीं सुनता है साला - ग्रभी साल बदमास को पुलिस के सुपरन करवाना हू ग्रगले स्टेशन पर।

पीठ में दो चार कोहनियों के ठूस खाकर आखिर सूरन्गास खड़ा हो गया ग्रौर ललकार कर बोला –

सा पुलिस के सुपरत करके हमारा क्या बिगाड लेगा ? बडा ग्राया धन्ना सठी —नरक का राक्षस दुष्ट दुजन है कोई हरि का जन नही है—जान पडता है र बनिया है कोइ ?

लाग बड जोरों स हस पड। सठ किटकिटा कर बाला—

'क्या बकता है र मर्दे पाजी कही के बडा ग्राया है भगवद भगती वाला अबके कह ता मान को खिडकी में स उठाकर फेंक दू ग्रभी ।'

'कहा फेंक दगा ? जसे धरती पर तेरा ही राज है कौड़िया का हिसाब लगाने वाला, तू क्या राज करेगा। माइ के ब दे

उसने भेजा है हम तेरे जैसे दुष्टों की खबरगीरी करने ।" सेठ किसी तरह मन मसोस कर बैठ गये और फिर लगे ऊंघने जानबूझ कर। गुस्से और भय से हाथ पैर उनके अभी भी थरथरा रहे थे।

इतने में एक स्टेशन सा आ गया। चाय गरम—चाय बमनिया सूरदास बोले, 'अब तो बाबा चाय मिलना चाहिए। अहा हा हा वैष्णवजन चाय नहीं पियेंगे ? सर्दी की वेला में—शरीर गर्म हो जाएगा—रोग विकार सब टल जाएगा। और बाहर झांक कर बोल उठे—

'ऐ-ऐ—लाओ चाय बमनिया सूरदास चाय पीयेंगे।

चाय वाला कप केटली देकर सरक गया। बड़ी तृप्ति की चुसकियां लेते हुए सूरदास ने चाय पी। चाय वाला दो बार आकर पैसे मांग गया कौन उत्तर दे ? सूरदास तो पान सुपारी जुटाने में लगे थे। एक अजहद पान खाने वाले भोपाली करण्डी खोलकर बैठे थे। सूरदास जब पान खा चुके तब सुरती की भी तलब हुई—वह भी पूरी हुई ! फिर इतने में चाय वाले ने किवाड़ खोलकर सूरदास से कहा—

पैसे लाओ न बाबा !'

पैसे हमारे पास कहां ? साईं के लाल देंगे। पैसा माया है और माया हम अपने पास नहीं रखते—पैसा सरकार से मांगो अरे हां, हम तो भगवान के हुक्म से चलते हैं।"

हराम का आता है नहीं पैसे थे तो नाक चूना था चाय पीने को—

सूरदास खिलखिलाकर हंस पड़े। उसके हाथ में कप केटली झपट दांत किटकिटाकर गुस्सा खाता हुआ चाय वाला सरक गया। इतने में कोई मूंगफली वाला निकल आया। सूरदास ने गर्म गर्म मूंगफली ले ली

और छिलके फैला-फैलाकर खाने लगा। इतने म गाडी चल पडी और मूगफली वाला पसा को चिल्लाता ही रह गया।

मूरदास गाने लगा—

'अजगर करे न चाकरी "

इस बार सूरदास गाते गाते बहुत ही उद्धत हो पडा और बडी विकट तानो से इतरा इतरा कर गाने लगा। लोगों के विश्राम का समय था—सो इस बार सभी का धय टूट गया। चारो तरफ से लोग टूट पड। वे सूटधारी विद्यार्थी शोर मचाते चिल्लाते आ धमके और लगे उसका हाथ मरोड कर उसे लताडने—

रामकिल कही का डबिल साला रा घटा हो गये हैं कमबख्त सिर खाये ही जा रहा है क्यो बे चुप रहना है कि नही उल्लू के पटठे। मन ने तमाम ता हवा खराब कर छोडी है—प्लेग कही का। ठहर जा अभी। अगले स्टेशन पर पुलिस के हवाले करता हू।' इतने म दूसरा आ धमका और उसकी गदन पकडकर बोला— क्यो बे टिकट कहा है तेरा बिना टिकट चलना है बे सुअर। मन भर माले का खाने को चाहिए। हराम का बच्चा तिलक छापा लगाके भगत बन गया है।

वे छोकडे उसे झकझोर खखेडकर उसकी जेबें तलाश रहे थे कि इतने ही म फतेहाबाद का स्टेशन आ गया। एक टी टी को आवाज देकर उन्होने बुलाया और प्राथना की कि इसे उतरवा देंगे तो बडी कृपा होगी।

टी टी ने सूरदास को झझोड कर उसका कान मरोडते हुए कहा 'क्या बुड्ढे जी! यहा बैठा दिया तो एसी हरकत कर रहे हो— उतार दूगा बेटा जो हरकतबाजी करोगे समझे—

जाते जाते टी टी उन भद्र जन से कह गये कि दो स्टेशन चला जाने दो। यहा सर्दी म ठिठुर कर मर जाएगा तो हत्या हो जाएगी।

सूरदास ने उसके पास से बोला —

हमको उतारेगा बाबू साहब ने ? राजा के बाप भी हमको गद्दी से नहीं उतार सकता। गद्दी किस मरे बाप की है—सबके बाप की है—पर सब अंधे न थे, जो अपने मन में लिए राज कर रही है। तुम बड़े धाराम से बड़ा बन उतार देना

सिपाही ने पूछा—

कहाँ जाओगे बाबा ?

हम सबसे बड़े राजा के गुन सिर नित मन्दिर में हमारा बसेरा है। तुम हमको क्या कुछ समझ हमको आदमी नहीं – मच्छर कीड़ा समझता है—राम फिर फिर जनम कर फिर मरते हो। अब हमको कोई देश से उ बाहर करो ? राजा अगर हमारा अपमान करे तो उसको भी हम उतार सकते हैं—उसका सिंहासन उलट सकते हैं।

हमको कोई सताए दगा तो हमारे सराप से वह ! भसम हो जाएगा। हम तो क्या करते सुम पर कोप नहीं करते समझकर कि भुलाना है तो क्या हुआ हरि का जन है । कुपित हो जाय तो हम राजा के महल को गिराकर उसमें आग दे हैं। तू हमको क्या समझता है छोकरे, हम साधु सन्त हैं कि कोई जन हैं ?

अब भी छत्रीस चुप रहना है कि फिर पुलिस को ही पड़ेगा।

सूरदास किलकारी मार कर हँस पड़ा—

पुलिस क्या कर लेगी हमारा !—पुलिस क्या राजा की

महमा' का बुलाओ—शिवाकर व तिरसूल म पिरो कर सबको टाग दूगा ! ताण्डव निरत करने लगूगा ता अभी परलय आ जाएगा और तुम्हारा राजा, रेल पुलिस और तुम सबके सब उडते फिरोग उमम समभे । दखो, मत ल्लिाओ रोस—मन दो नाम सन्त को मान जाओ कहना ।'

कह कर सूरदास झूम झूम कर किंगरी बजाता हुआ नाचन लगा—

'बम बम भोल जय शकर ।
जय प्रलयकर रुद्र दिगम्बर '

इतन ही म स्टेशन आ गया। दो तीन यात्री जाकर एक दो पुलिस वाला का बुला लाय । सूरदास झूम झूम कर प्रचण्ड स्वर म गा रहा था और बराबर उन्मत्तियार नाच रहा था एव रुद्र प्रसन्न रोष से उसके नथुन फडक रह थ।

पुलिस वालो न बिना कुछ वाले ही चुपचाप पकडकर उसे नीचे खींचा । वह डिब्बे म टकराता या पछाडे खाता था और और भी भीषण होकर गा रहा था कौन है जो उतार सकेगा उसे—कौन है जा उस वहा से हटा देगा ? उस पर कौन शासन करेगा ? अपना शासक आप जब वह हो गया है—

गाडी न सीटी दी । धक्के देकर पुलिस वालो न उस बाहर निकाल दिया ।

गाडी चल पडी । मैं खिडकी पर आन के अपने कौतूहल को रोक न सका । बाहर भाककर दखा—सूनसान विस्तृत प्लटफाम भयानक शीन एव तीर सी ठडी हवाए और चारों ओर अधकार स भरी रात्रि भाय भाय कर रही है । दूर पर स्टेशन की अकली बत्ती अकम्प करुण लौ से जल रही है । सूरदास चुपचाप वहा खडा रह गया । उस अधकार में निरभियान शून्य स्वच्छ एक ही दिशा की ओर मुह उठाये वह

प्राकृति प्रवचन है—जो वह रहा था—

'उस ओर उतार सकेगा ? वह राजा को गद्दी से उतार सकता है—सिंहासन उलट सकता है—महलों में आग लगा सकता है ।'

वह रहा प्रवचन निरन्तर निनाद, शाश्वत सनातन युग। उस अंधकार में उसके एक ओर सिंहासन, विभव सत्ताधिकार सोना चाँदी मणि माणिक आदि अपार भोग सामग्रियों के ढेर हैं और उसके दूसरी ओर अनन्त भूख, अभाव, रोग शोक तृष्णा बुभुक्षा हिंसा युद्ध दुर्भिक्ष महामारी, अपरिसीम दुःख दारिद्र्य जरा मरण पड़े हैं ।

और बस्तियों वाली रसगाहों में भी, सीमा तथा अन्य सम्पाओं अपने अपने कम्बल रजाई में मुँह ढक अपने अपने दुःख-सुखों में लिपट घिरे बंद किवाड़ कर जा रहे थे कि चले जा रहे थे । ○

पूर्ण विश्राम

○

डाक्टर ने जब बांह पर काला कपड़ा लपेटा और रबर की थली से हवा फूंक कर नाड़ी की गति देखी और फिर गणित के गुणा भाग, जोड़ जरब का सहारा लेकर बताया कुछ सीरियस नहीं है दफ्तर से छुट्टी लेकर बाहर हो आइये विश्राम आपको पूर्ण नीरोग कर देगा। लेकिन विश्राम भी पूर्ण होना चाहिए। तो पत्नी बड़ी प्रसन्न हुईं।

इस पूर्ण विश्राम और पूर्ण नीरोग के मुहावरे से मैं बहुत डर गया। जिस शब्द के साथ पूर्ण लग जाता है वह पूर्ण भयावह हो जाता है

घर आकर श्रीमती जी को कह दिया जुहू की तयारी कर लो हम दो दिन पूर्ण विश्राम करेंगे।

एक दिन बाद पूर्णिमा भी थी। चांदनी रात का मजा जुहू पर ही है। एक दिन पहले आधी रात मे ही उन्होंने तयारी शुरू कर दी। दो बजे का अलार्म बज गया। स्वयं वह दो से पहले ही उठ बैठी और कुछ नोट करने लगीं। जब तक मैं उठा तब तक फहरिस्त तयार थी।

श्रीमती जी ने इन सब कामो की फहरिस्त बनाकर मेरे हाथ मे देते हुए कहा जरा मेरे साथ गरज तक चलिये वहां पर तयारी के

प्राकृति प्रचल है—जो कह रहा था—

उस कौन उतार सकेगा ? वह राजा को गद्दी से उतार सकता है—सिंहासन उलट सकता है—महलों म आग लगा सकता है ।

वह खडा अचचल निस्तब्ध निरन्तर शाश्वत एरो मुग । उस अधकार म उसके एक ओर सिंहासन, विभव सत्ताधिकार सोना चांदी मणि माणिक आदि अपार भोग सामग्रियां के ढेर हैं और उसके दूसरी ओर अनन्त भूख अभाव रोग शोक तृष्णा बुभुक्षा हिंसा युद्ध दुर्भिक्ष महामारी अपरिसीम दुःख दारिद्र्य जरा मरण फल पडे हैं ।

और बत्तियों वाली रेलगाडी में मैं मौसी तथा अन्य सहयात्री अपने अपने कम्बल रजाई में मुंह ढके अपने अपने दुःख-सुखों में लिपटे घिरे बन्द विवश चले जा रहे थे कि चले जा रहे थे । ○

पूर्ण विश्राम

○

डाक्टर ने जब बाहु पर काला कपड़ा लपटा और रबर व थली स हवा फूक कर नाड़ी की गति देखी और फिर गणित के गुणा भाग, जोड़ जरब का सहारा लेकर बोला कुछ सीरियस नही है दफ्त स छुट्टी लेकर बाहर हो आइये, विश्राम आपको पूर्ण नीरोग कर देगा लेकिन विश्राम भी पूर्ण होना चाहिए। तो पत्नी बड़ी प्रसन्न हुई।

इस पूर्ण विश्राम और पूर्ण नीरोग के मुहावरे मे मैं बहुत ड गया। जिस श ब्द के साथ पूर्ण लग जाता है वह पूर्ण भयावह हो जा है

घर आकर श्रीमती जी को कह दिया जुहू की तैयारी कर ल हम दो दिन पूर्ण विश्राम करेंगे।

एक दिन बाद पूर्णिमा भी थी। चादनी रात का मजा जुहू प ही है। एक दिन पहले आधी रात मे ही उन्होने तयारी शुरू कर दी। बजे का अलार्म वक्त लग गया। स्वय वह दो स पहले ही उठ ब और कुछ नोट करने लगी। जब तक मैं उठा तब तक फहरिश्त तयार थी

श्रीमती जी ने इन सब कामो की फहरिश्त बनाकर मेरे हाथ देते हुए कहा जरा मेरे साथ गरेज तक चलिये वहा पर तयारी

सामान की दूसरी फहरिस्त भी दूंगी।

उस फहरिस्त में मोटर में हवा भरने की पिचकारी ट्यूब वाल्व, रबर सोल्यूशन एक नया इंजिन ग्रायल आदि आदि कई चीजें और भी लिखी थी।

दिन भर दौड़ धूप करके मैं पायपनी से मिस्त्री लाया। उसकी बकरी दाढ़ी में दस पाव धान ही गया था और कानों में उसके घाव से बची सनक टटके रंगी थी। बुढ़ापे से कांपते हाथों से उसने जब काम शुरू किया तो समझा चलो एक भभर कटा मगर उस सुत ने सन ने मुझे एक मिनट चैन से न बैठने दिया। कभी कीलें कभी लकड़ी कभी कब्ज लाने के लिए वह मुझे हर आरा घर बाजार भेजता रहा। सुबह से शाम हो गयी मगर शाम तक चार में से दो खिड़कियों की चटखनियाँ भी नहीं कसी गयी। मोटर के लिए जरूरी सामान लाते-लाते रात हो गयी। पचास रुपये से अधिक खर्च हो गये और दौड़ते दौड़ते मैं, इतना हाँफ गया कि रात तक दिल की धड़कन दुगुना हो गया था।

रात को सोने लगे तो श्रीमती जी ने आश्वासन देते हुए कहा 'कल जुहू पर दिन भर विश्राम लेंगे तो थकावट दूर हो जायगी।' बस उन्हें मेरी बीमारी से काफी सहानुभूति थी और जो कुछ काम उन्होंने मुझसे कराया था वह अपने लिए नहीं मेरी धड़कन को दूर करने के लिए ही कराया था। इसलिए मैं उनके आश्वासन से सचमुच पसीज गया। उनका विश्वास है कि उनके सब कामों का लक्ष्य मेरी सुख शान्ति ही होता है। और यह भी कि वह इस लक्ष्य को जीवन के किसी भी क्षण अपनी आँखों से ओझल नहीं करती।

श्रीमती जी ने अपने कर कमलों से घड़ी की घुण्डी घुमाकर एलार्म लगा लिया जिससे कहीं जुहू के लिए प्रस्थान में देर न हो जाय

और वहा जाकर जो पूर्ण विश्राम लेना है उसमे निमिषमात्र त्रुटि न रह जाय। रात के बारह बजे श्रीमती जी ने फिर से सब चटखनियो का ट्रायल लिया और खुद बाहर तशरीफ ले जाकर मास्टर का पूरा मुआयना करके यह तसल्ली कर ली कि फेहरिस्त में लिखा सब सामान आ गया या नहीं।

सुबह पाच बजते ही एलाम ने शोर मचाया। उस समय अगर श्रीमती जी दिल पर हाथ रख देती न देती तो निस्सन्देह दिल की धडकन चौगुनी हो जाती और शायद डाक्टर का कहा बुलाना पडता। एस सकट काल मे श्रीमती जी बडे काम आती थी।

रानी हाल न हाल जूडे की तयारी क्लाइमेक्स पर पहुँच गयी। स्टोव को भी आज ही धोखा देना था। वह दस मिनट बुझने लगा। आधा घटा उसमे तेल भरने, धौंकनी करने मे चला गया। आखिर चाय का प्रोग्राम स्थगित कर दिया गया और हम दत्तचित्त हो तयारी मे जुट गये। वाटरलू जाने से पहले नेपोलियन ने भी एसी तयारी न की होगी।

एसी महत् योजनाओ के सम्पन्न करने मे हम पति पत्नी परस्पर सहयोग भावना से काम करने पर ही विश्वास रखते हैं। सहयोग भावना हमारे जीवन का मूल मत्र है।

सहयोग मन, वचन कर्म तीनो से होना है। जीवन का वह मूलमत्र मुझे भूला न था। श्रीमती जी मुझे मेरे कामो की याद दिलाने लगीं और मैं उनके उपकार के बदले उनकी चिताओ में हाथ बटाने लगा।

मैंने याद दिलाया— पूरियो के साथ मिर्ची का अचार जरूर रख लेना वो जो दिल्ली से आया है, वह रखना।'

श्रीमती जी अचार का मर्तबान उतारने के लिए स्टूल पर चढी और मर्तबान में से दो चार मिर्ची निकाल कर पूडिया पर रखते हुए बोली —

अचार तो रख लूंगी पर तुम भी अखबार रखना न भूल जाना। मैंने अभी पढ़ा नहीं है।

अखबार रद्दी की टोकरी में प्रवेश कर चुका था उसमें से अखबार ढूंढ़ते हुए ढंढत मैं बोला वह तो मैं रख लूंगा ही लेकिन तुम वह गुलूबन्द न भूल जाना जो हम पिछले साल का मोर से लाये थे। जुहू पर बड़ी मन्द हवा चलती है।

गुलबन्द तो रख लूंगी लेकिन तुम कंघी वगैरह सूटकेस में रखना न भूल जाना नहीं तो नहाना धरा रह जाएगा। मुझे ही लौटना होगा।

'और तुम कहीं रबर का भूल गयी तो गजब हो जायगा।

वह तो रख लूंगी लेकिन तुम भी एक काम करो कुछ नोट पेपर और लिफाफे भी रख लेना। मेरी अलमारी में पड़े हैं। और देखो राइटिंग पैड भी न भूल जाना।

राइटिंग पैड क्या करोगी ?

कई दिन से मां की चिट्ठी आयी पड़ी है। जुहू पर खाली बैठे जवाब भी दे दूंगी। यों तो वक्त भी नहीं मिलता।

चिट्ठी से याद आया कि कहीं पोस्टल स्टाम्प न भूल जाना नहीं तो गजब हो जायेगा। चिट्ठी लिखी लिखाई रह जायेगी।

और जरा वे चिट्ठियां भी रख लेना जिनके जवाब देने हैं चिट्ठियां ही रह गयी तो जवाब किसके देंगे ?

और सुनो बिजली के बिल और बीमा के नोटिस आये पड़े हैं उनका भी भुगतान करना है उन्हें भी डाल लेना।

तब तो फिर चेक बुक भी रख लो कहीं भूल गये तो भुगतान क्या होगा ?

"रख लूंगा जरूर रख लूंगा।"

तुम तो यों ही कह देते हो और भूल जाते हो।'

"पैन तो तुम अक्सर भूल जाती हो।"

'मैं भूल जाती हूं तो तुम कौन सा याद रखते हो?'

मैं क्या याद नहीं रखता?'

'उस दिन तुम धूप का चश्मा भूल गये तो सर का दर्द चढ़ गया। इसलिए कहती हूं छतरी भी रख लेना।'

'अच्छा बाबा रख लूंगा। और देखो, धूप से बचने की क्रीम भी रख लेना। शाम तक झाईं न पड़ जायें। वहां बहुत कड़ी धूप पड़ती है।

श्रीमती जी कहती जा रही थी कि रख लूंगी रख लूंगी, लेकिन ढूंढ रही थी नल-कटर कंघा और ब्रुश। और सब तो मिल गया था लेकिन नल कटर नहीं मिल रहा था इसलिए बहुत घबराई हुई थीं।

मैंने कहा— जाने दो नेल कटर बाकी सब चीजें तो रख लो।

इधर मैं अपने लिए नया अखबार और कुछ ऐसी किताबें थैले में भर रहा था जो बहुत दिन से समालोचना के लिए आयी थी और सोचता था फुरसत से समालोचना कर दूंगा। सोचा—ऐसी फुरसत कब मिलेगी? आखिर तीन किताबें थैले में झोंक ली।

कई दिनों से कविता करने की भी धुन सवार हुई थी। उसकी कई कतरनें इधर उधर बिखरी पड़ी थी। उन्हें भी जमा किया। सोचा काव्य प्रेरणा के लिए जुहू से अच्छी जगह और कौन-सी मिलेगी!

इस तैयारी में इधर श्रीमती जी ने अपने शृंगार-सज्जा का सब सामान कई अच्छी में भर लिया था और मैंने अपनी राइटिंग टेबिल का

सब सामान कई थैलों में भर लिया था।

और आखिर कई अटैची कई थैले कई झोले भर कर हम जुहू पहुंचे और धीरे धीरे सब सामान उस कुंज में नीचे ले आये जहां दरी बिछा कर बैठने का इरादा किया था।

पांच-सात मिनट तो हम स्वप्न लोक में विचरते रहे। हमने सोचा वे लोग कितने सौभाग्यशाली हैं जिन्हें जुहू पर निश्चिन्त होकर बैठने का अवकाश मिल जाता है। आज हम भी अवकाश है आज दुनिया भर की चिन्ता भूल कर हम पूर्ण विश्राम करेंगे। आखिर डाक्टर ने पूर्ण विश्राम की सलाह जो दी है।

हमने बेदिंग सूट पहने और समुद्र में नहाने को चल पड़े।

समुद्र तट पर और लोग भी नहा रहे थे। समुद्र में उठते हुए ज्वार के साथ पश्चिम का पवन भी चल रहा था। एक ऊंची लहर ने आकर हम दोनों को ढक लिया। लेकिन दूसरे ही क्षण वह लहर शान्त हो गयी। लहर की उस थपेड़ से न जाने श्रीमती जी के मस्तिष्क में क्या नयी स्फूर्ति आ गयी कि उन्होंने मुझसे पूछा तुम्हें याद है बरामदे की खिड़की को तुमने अन्दर से बन्द कर लिया था या नहीं।

मैं कह उठा मुझे तो कुछ याद नहीं पड़ता।

अगर वह बन्द नहीं हुई और खुली ही रह गई तो क्या होगा? —कहते-कहते श्रीमती जी का रंग पीला पड़ गया।

उसके बाद समुद्र की नाचती लहरें भी उनका चिन्ता भार हल्का न कर सकीं। जल्दी-जल्दी कपड़े पहन कर वह बोलीं, तुम भी अजीब भुलक्कड़ हो। तुम्हें याद ही नहीं कि उसे बन्द किया या नहीं। बोलते क्यों नहीं? बोलो तो।

मैंने कहा, 'चलो छोड़ो अब इन चिन्ताओं को—जो होना होगा हो जायेगा।"

मेरी बात से तो उनकी आखो से आसुओ का समुद्र ही बह पडा। उनके कापते ओठो पर यही शब्द थे "अब क्या होगा ?"

उन्होने जल्दी-जल्दी चीजें समेटनी शुरू कर दीं। जो भोल खाली किये थे उनम सामान भरना शुरू कर दिया। थैलियो को खाली करना आसान है भरना कठिन। खाली करने म पाच मिनट लगे थे तो भरने मे आधा घटा लग गया।

'और अगर खिडकिया खुली रह गयो होंगी तो हार का क्या होगा"—यह सोच उनकी अधीरता और भी ज्यादा होती जा रही थी। जिस धडकन का इलाज करन को जहू पर आया था वह दस गुना बढ गयी थी।

मैंने तेजी म मोटर चलायी मोटर का इजिन धक धक कर रहा था लेकिन मेरा दिल उससे भी ज्यादा तज रफ्तार से धडक रहा था।

जिस रफ्तार से हम गये थे उसी रफ्तार स वापस आये। अन्दर आकर देखा कि खिडकी की चटखनी बदस्तूर लग रही थी, सब ठीक-ठाक था। मैंने ही वह लगायी थी, लकिन लगा कर यह भूल गया था कि लगायी या नही। और इसका नतीजा यह हुआ कि पहले तो मेरे ही दिल की धडकन बढी थी, अब श्रीमती जी क दिल की धडकन भी बढ गयी। ○

बनारसी ठग

○

बनारस में एक ठग रहता था। उसका काम ही था भोले भाले लोगों को फसाना और चकमा देकर उनका माल मत्ता हथिया लेना। धीरे धीरे पहले वह अपने मोहल्ले में बाद में अपने शहर में इतना बदनाम हो गया कि लोग उसकी ओर से बहुत सावधान रहने लगे। उसे आता देख कर घर के दरवाजे बंद कर लेते अगर मार्ग में वह खड़ा होता तो चक्कर देकर निकल जाते उनका वही हाल था कि दूध का जला छाछ को भी फूंक फूंक कर पिये।

जब ठग ने देखा कि शहर में उसकी कमाई कुछ भी नहीं रही—तो एक दिन वह अपनी स्त्री से बोला—देखो अब तो यहां मेरे हथकंडे सबको पता चल गये हैं इसलिए मैं परदेश जाता हूं। सुना है दिल्ली बहुत बड़ा नगर है वहां बड़े सेठ साहूकार रहते हैं अगर एक दो भी फंस गये तो मालामाल हो जाऊंगा। तुम फिक्र मत करो। मैं जल्दी ही लौट आऊंगा। बस अब तुम कल मेरे चलने की तैयारी कर छोड़ना।

दूसरे दिन ठग की स्त्री ने पोटली मिट्टी के लड्डू बांध कर उस पर रामदाने भली प्रकार चिपका दिये और चलते समय उन्हें ठग को थमा कर बोली—लो ये लड्डू। यह तुम्हारे काम आयेंगे। और हां यह है चांदी का एक कटोरा इसको भी तुम अपने पास रख छोड़ो। वक्त बेवक्त कभी काम ही

आ जायेगा।

कटोरा हाथ में लेते हुये ठग ने कहा—मगर यह कटोरा तो ठीक है पर मैं ये मिट्टी के लड्डू क्या करूंगा?

स्त्री बोली—रास्ते में किसी भोंदू को चकमा देकर कुछ भोजन प्राप्त करने का सिलसिला इन्हीं लड्डू के जरिये हो सकता है।

प्रसन्न होकर ठग बोला—शाबाश! तुम्हारी अक्ल तो मुझसे भी तेज निकली। तुम्हारी तो जितनी प्रशंसा की जाय थोडी है। ठगों की देवी की कृपा हुई तो मार्ग में ही काम का कुछ सिलसिला लग जायगा।

चलते चलते मथुरा पार करने पर उनको और ठग मार्ग में मिल गया। यह भी मथुरा का प्रसिद्ध ठग था और शिकार की खोज में दिल्ली ही जा रहा था। राम राम के बाद मथुरा के ठग ने बनारस के ठग से पूछा—कहां भाई कहां से आ रहे हो? क्या नाम है तुम्हारा?

बनारस का ठग बोला—मुझे तो लाला मुन्नालाल कहते हैं, बनारस से आ रहा हूं। दिल्ली किसी रोजगार की तलाश में जा रहा हूं। कहो तुम्हारा क्या अता-पता है?

मथुरा के ठग ने कहा—मेरा नाम तो छैलीलाल चौबे है। मथुरा का रहने वाला हूं। मैं भी अर्थ की खोज में दिल्ली ही जा रहा हूं। एक से दो भले चलो तुम से भेंट हो गई। मजे से सफर कट जायेगा।

बस रास्ते में दोनों जने एक नदी के किनारे एक सराय में रुके। छैलीलाल ने देखा कि मुन्नालाल के पास तो रामदाने के लड्डू हैं। इधर मुन्नालाल भी यह बात ताड़े रहा कि मेरे साथी के गमछे में पेड़े बंधे हैं। मुन्नालाल ने सोचा मथुरा के पेड़े तो खूब प्रसिद्ध हैं अपने रामदाने के लड्डू इन्हें देकर इसके पेड़े हथियाने चाहियें। अतएव उसने कहा—क्या चौबे जी, आप के यहां के मथुरा के पेड़े तो बड़े बढ़िया होते हैं? चौबे जी मौके की

ताक में थे झट बोले— हां हां तो है लालाजी। पर तुम जानो रोज पेड़े खाते-खाते मेरा तो उनसे मुंह फिर गया है सो पेड़े तुम ले लो—लड्डू मुझे दे दो। यही तो लालाजी चाहते थे। उन्होंने झट से लड्डू उन्हें पकड़ा दिये और पेड़े खुद ले लिये। मुंह हाथ धोकर दोनों खाने बैठे। और दोनों ही मन ही मन सोच रहे थे कि एक दूसरे को अच्छा चकमा दिया।

मुन्नालाल ने जैसे ही पेड़ों में मुंह मारा—रामरज से उनका मुंह भर गया। इधर चौबे कनखियों से यह तमाशा देख रहा था उसने मुस्करा कर पूरा लड्डू मुंह में डाल कर जैसे ही चबाना शुरू किया—पीली मिट्टी का लड्डू फूट कर मुंह में बिखर गया। दोनों ही ठग मन ही मन एक दूसरे के हथकंडों की प्रशंसा करके चकित रह गये।

रात को सोते समय मुन्नालाल ने सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि चौबे मेरे चांदी के कटोरे पर हाथ साफ कर दे। उसने रात को अपने सिरहाने लटकते हुए छींके पर कटोरे में ऊपर तक पानी भर कर रख दिया ताकि अगर कोई कटोरे को छुयेगा भी तो उसका पानी अवश्य छलकेगा। उस समय मैं तुरन्त जाग जाऊंगा। चौबे ने जब देखा कि लाला सो गया है तो वह उठा और उसने कटोरे में रेत डाल दी पानी रेत ने पी लिया बस कटोरा उठाकर दबे पांव चौबे बाहर निकल आया और सीधे नदी पर पहुंचा। घुटने घुटने तक पानी में जाकर उसने कटोरा नदी में दबा दिया। और घर आकर लाला के पास ही सो गया। रात के तीसरे पहर जब लाला की आंख खुली तो छींके पर कटोरा न पाकर वह बड़ा हैरान हुआ। उसने चौबे के बदन पर धीरे से हाथ फेरा तो देखा कि चौबे की टांगें गीली हैं। बस उसे असलियत समझते देर नहीं लगी वह पांवों के निशान देखता हुआ नदी तक आ पहुंचा और अपना कटोरा निकाल लाया।

सुबह कटोरे को छींके पर देख कर चौबे ने सोचा अब तो खुल

पढ़ने मे ही खर है अतएव वह लाला से बोला—भाई लाला ! तुम भी छुपे रुस्तम निकले। खर अब एक दूसरे से चालें खेलने से काम नहीं चलेगा। दिल्ली पहुचने से पहले कुछ कमा कर ही यहा से चलो। दिखना है इस सराय की बुढिया पसे वाली है सो पहले इसको अपना शिकार बनाया जाय तो ठीक है। मुन्नालाल राजी हो गया। बस दूसरे दिन जब बुढिया अपने पस चुकवाने आई तो दोनों ठग बोले—अम्माजी ! हम तो गरीब यात्री हैं पैस हमारे पास तो हैं नही वह ता कुछ दिन आपकी चाकरी करके पैसे चुका दें पर हमारे खान-पीने का प्रबध आपको करना होगा।

बुढिया इनसे भी अधिक होशियार थी—बोली ठीक है, तुम लोग महनत से काम करो। पर पेट भर खाना तो मैं रात को दू गी जब दिन भर का काम तुम खतम कर लोग। उन्होंने पूछा—अम्मा क्या काम हम करना होगा ? बुढिया बोली बस एक जना तो मेरी सीधी सादी सी एक गाय है उस चरागाह म चराने ल जाय और दूसरा आदमी कुयें के पास जो गोभा के फूलों की क्यारी है उसे पानी से भर द। बस इतना ही काम है।

ठगों ने सोचा यह कौन-सा अधिक काम है। मजे मे दिन कट जायेंगे, मौका देख कर किसी दिन बुढिया का माल असबाब लेकर चलत बनेंगे। बस चौब न गाय चराने का काम लिया और लाला ने पानी सींचने का। सुबह रात की एक एक बासी रोटी खिला कर बुढिया ने दोनो को काम पर भेज दिया।

चौब गाय को लेकर चला। कुछ दूर हरी हरी घास देख कर गाय चरन लगी। चौब भी एक पेड की छाया म आराम करने के लिये लेट गया। इतने में ही वह गया पूछ उठा कर जोर जोर से भागने लगी। चौबे उठ कर उसे पकडने चला पर वह भागती गई और भागती गई। अब तो चौबे बडा परेशान हुआ। सोचा किसी तरह गाय को पकड पाऊ तो रस्सी

री बाध है। पर गाय पकड़ में ही नहीं आती थी। वह भाग कर कुछ दूर रुक कर चरने लगती और जब हांफते हांफते चौबे पास आते नजर आते फिर भागने लगती। चौबे का भारी भरकम शरीर था, वह भागते भागते थक गया। शाम को जब गाय घर घर घर गई तब जाकर कहीं परछाई में आई। घर लौटते समय चौबे ने सोचा कि कल मैं तो सिंचाई का काम लूंगा और लाला को गाय चराने भेजूंगा। आज जो मुझ पर बीती वह मैं ही जानता हूँ। भागते भागते हाय हाय दुख आया। लाला तो मजे में अमराई में सो रहा होगा।

इधर लाला का हाल भी बुरा था। उसने तो सोचा था कि बस दो डोल में वह क्यारी भर जायगी। सारे दिन मैं चैन की बंसी बजाऊंगा। उसने दो डोल छोड़ने की जगह पचास डोल पानी डाल दिए पर क्यारी में पानी दिखाई नहीं पड़ता था। असल में बात यह थी उस बुढ़िया ने क्यारी के नीचे एक ऐसी अलोप नाली बनाई हुई थी कि उसका सब पानी बह कर एक बड़े खेत में चला जाता था जिससे उसकी सिंचाई होती थी। यही कारण था कि क्यारी को सींचने वाला आदमी क्यारी में पानी डाल डाल कर हैरान हो जाता था पर उसमें पानी रुकता ही नहीं था। लाला ने सोचा चौबे तो मजे में होगा। खैर कल उसे यह काम सौंप कर मैं गाय चराने जाऊंगा।

शाम को जब दोनों मिले तो लाला ने चौबे से पूछा—कहो चौबे! कैसी गुजारी आज? चौबे ने बनावटी प्रसन्नता मुंह पर लाकर कहा—क्या कहूं लाला। आज तो सारा दिन नदी के किनारे पीपल के पेड़ के नीचे सोकर ही गुजारी। गया तो ऐसी साधी है कि इधर उधर चर कर जब इसका पेट भर गया तो वह खुद ही पेड़ के नीचे आकर बैठ गई। कहो तुम्हारी कैसी कटी? लाला बोला—बस पूछो न कुछ। मैंने तो दो डोल से ही क्यारी भर दी। इसके बाद तो बगीचे में जो झूला लटक रहा है उसी पर बैठा झूलता रहा। चारों ओर अमराई—ठंडी ठंडी हवा—खूब

पेंग बढ़ाई और गीत गाये बचपन के दिन याद आ गये। बड़े आनन्द से दिन कटा।

रात को लाला के हाथो के छाले दुख रहे थे। इस कारण नींद नहीं आ रही थी और चौबे की टागो म दर्द था, इस मारे उसकी आख नही लग रही थी। लाला ने करवट ली और चौबे को जागत देख पूछा—क्यो सोये नहीं ? चौबे बोला—क्या बताऊ सारे दिन भर सोया रहा इस मारे नींद नहीं पड रही है। तुम क्यो कराह रहे थे ? लाला बोला—चौबे जी मूने की रस्सी नारियल की थी इस कारण पेंग बढाते समय छाले पड गये। चौबे बोला—अच्छा कल तुम गैया चरान चल जाना हाथों को आराम मिल जायगा और जरा हम पेंग बढाने का मजा ले लेंगे। लाला बोले—हा हा मैं कल गया चराने चला जाऊगा। खुशी से तुम मेरा काम सभालना।

दूसरे दिन चलने समय चौबे म लाला से कहा—लाला और तो वहा सब आराम है पर नदी के किनारे जरा सीलन है सो तुम लटने के लिये अपनी खटिया जरूर साथ ले जाना। लाला ने खटिया सर पर धर ली और दूसरे हाथ से गाय की रस्सी पकड कर जब चलन लगा तो चौबे से बोला—चौबे भया ! नारियल की रस्सी हाथ म न गडे इसलिये हाथो पर कपडा और लपेट लेना।

इस प्रकार दोनो अपनी अपनी जानकारी मे एक दूसरे को चकमा दने की चतुराई पर हसने हुए चल दिये।

जगल में पहुच कर लाला का तो बुरा हाल हुआ। गाय के पीछे पीछे सिर पर खटिया रख कर उसे सारे दिन भागना पडा। इधर चौबे का भी पानी सीचते सीचते बुरा हाल। तिस पर बुढिया ने आकर टोक दिया कि हाथों पर कपडा लपेट कर तो तुम भला क्या सिचाई कर सकोगे ? अगर आज क्यारी नहीं भरी तो पेट भर कर खाना नही मिलेगा।

शाम को जब दोनो ठग मिले तो एक दूसरे से बोले—भया इस तरह आपस म ही चालबाजी करने से काम कमे बनगा ? यहा ग्राकर तो उल्टे लेने के देने पड गये । बुढिया हम दोनो से तेज निकली । चलो जरा चल कर खिडकी म से इसके कमरे म झांकें कुछ पता ता लगे कि वह क्या करती है । दिन भर की कमाई कहा रखती है ?

वस दवे पाव वे दोनो बुढिया की खिडकी के पीछे पहच । उन्होने देखा बुढिया एक लोह का सदूक खोल बठी है उसम जेवर रुपय ग्रादि भरे हुये है । बुढिया गिन गिन कर रुपये थली म भर रही है । पर यह बुढिया भी कम चालाक नही थी। ग्रपनी सदूक क ढक्कन म अन्दर की ग्रोर जो काच लगा था उसमे स उसने उन दोनो ठगो को खिडकी क पास छुप कर भाकते देख लिया था । उसने सोचा ग्रब तो उन्हे मरा माल टाल पता चल गया है । इसलिये इस सदूक म ग्रब कुछ रखना ठीक नही । दूसरे दिन उसने चुपके से उसमे से सब जेवर ग्रौर रुपये निकाल कर पत्थर भर दिय ग्रौर दोना ठगा को बुलाकर कहा—देखो वेटा । मरे तो बाल बच्चा कोई है नही । तुम्ही लोग ग्रगर मेरी ठीक सेवा करोग तो तुम्हे ही सब दे जाऊगी । घर मे जोखिम की चीज रखन म डर है । चोर अधिक तर ग्रधेरे म ही सेंध लगाते हैं । इसलिये ग्रधेरे म ग्रपने इस सदूक म सब रकम भर कर कुए म छिपा देती हू । सदूक भा ी है—सो तुम दोनो जाकर इसे सामन वाले कुए म डाल ग्राग्रो।

ठगो ने सोचा—यह भी ग्रच्छा हुग्रा । चलो इस तरह से तो आसानी से सब धन हमारे हाथ लग जायेगा । रात को कुए म डबकी लगा कर हम सदूक निकाल कर ले जायेंगे । बस उन्होने बुढिया को दिखा कर उसे कुए म डाल दिया । रात को दोनो ठग मजबूत रस्सा लेकर कुए पर पहुँच । चौब वोला—लाला तुम जरा हलके वदन के हो इसलिये तुम कुए म कूद जाग्रो मैं रस्सी लटकाता हू । जब सदूक मिल जाय तो आ।ाज

देना, मैं खीच लूगा। लाला बोला—अच्छा ठीक है। पहली डुबकी मे ही लाला के हाथ सन्दूक लग गया। उसने सोचा पहले खोल कर तो देख लूं कि इसमे है क्या ? कुछ कीमती जेवर हाथ लगे तो उसे मैं कमर मे ही खास लूगा। यह विचार कर उसने सन्दूक खोला। देरी होने से कही चौबे को शुबह न हो जाय इसलिये वह बोला—चौबे भाई ! दिखता है सन्दूक बहुत नीचे उतर गया है। मुझे तीन चार गोते लगाने पड़ेंगे। इस प्रकार चौबे को भुलावे मे डाल कर उसने सन्दूक कुए के अन्दर ही खोल लिया। उसमे ईंट पत्थर भर देख कर लाला ने सोचा बुढ़िया तो हम दोनो से चाल खेल गई। अब अगर चौबे को इसी समय यह भेद बताता हू तो सभव है वह मुझे कुए मे ही छोड कर चल दे। इसलिये कोई ऐसी चाल चलनी चाहिये कि चौबे भी याद रखे कि किसी बनारसी ठग से पाला पडा था। कुछ सोच कर वह बोला—चौबजी ! मैं सन्दूक को बस के रस्सी से बाध देता हू और जब आवाज दू तो तुम सन्दूक खीच लेना। लाला के आवाज देने पर चौबे ने रस्सा खीच ली और जब सन्दूक दिखाई पडने लगा उसने गाय बना कर उसे उठा कर कुए की जगत पर रख लिया। फिर उसने सोचा—अब लाला को सबक सिखाने का मौका है। बच्चू जी को कुए मे ही छोड कर सन्दूक लेकर चलता हू। बस सन्दूक सिर पर रख कर चल दिया। वजन के मारे उसकी गर्दन टूटी जा रही थी—पर वह अपने मन को यही समझाता जा रहा था कि बस अब इस बड़े सन्दूक के सारे माल का मैं ही मालिक हू। और थोडी देर की तकलीफ है—टीले के उस पार जाकर सन्दूक खोलूगा।

ऊची-नीची जमीन थी—धक्के लग रहे थे। इतने मे चौबे को सुनाई पडा। चौबे भया जरा धीरे धीरे—चौबे को आवाज परिचित सी लगी। पर उसने सोचा भला लाला यहा कैसे आ सकता है। वह तो कुए मे डुबकियां खा रहा होगा। कुछ दूर और चलने पर उसे फिर सुनाई पडा— भया जरा धीरे धीरे मेरा भी ख्याल करो।

चोर ने सोचा निश्चय है लाला पीछा करता हुआ आन पहुंचा है। वह आकर जरूर माल बांटने का तकाजा करेगा। इसलिए सन्दूक में से कीमती गहना निकाल कर जल्दी से पास के गड्ढे में छिपाना ठीक होगा। यह विचार कर उसने सन्दूक सिर पर से उतार कर नीचे धर दिया और ज्योंही खोला उसमें लाला को बैठा पाकर चोर तो हैरान होकर बोला—हाय ! इतनी दूर मैं तुम्हें ही सिर पर लाद कर चला आ रहा था ? सन्दूक के माल टाल का क्या हुआ ?

हंसता हुआ मुन्नालाल बाहर निकल आया और बोला – हूं चोर भया ! तम तो मुझे कुएं में ही छोड़ना चाहते थे पर मैं भी कोई कच्ची गोली नहीं खेला था जो इस आसानी से पिट जाता। और रही माल मत्ते की बात सो वह बुढ़िया नट्टा पर दम्मा निकली। वह हम से भी चाल मन गई। उसने ईंट पत्थर भर कर सन्दूक कुएं में डलवा दिया था।

सब असलियत जान कर चोर खिसिया कर रह गया। फिर हाथ जोड़ कर बोला—भैया राम राम ! हम दोनों एक साथ रह कर धंधा नहीं कर सकते। एक दूसरे पर ही हाथ सफाई करने की कोशिश में रहते हैं। तो तुम जाओ पूर्व को और मैं जाता हूं पश्चिम को।

लाला बोला – हां ठीक है चोरजी ! अच्छा राम राम !

रास्ते भर चोर सोचता जा रहा था—मैं तो अपने को ही चतुर समझता था पर इस बनारसी ठग से तो भगवान बचाये। ○

चौबे ने सोचा जितना है लाला पीछा करता हुआ आन पहुंचा है। वह मारकर जरूर माल बांटने का तकाजा करेगा। इसलिये सन्दूक में से कीमती गहना निकाल कर जल्दी से पास के गड्ढे में छिपाना ठीक होगा। यह विचार कर उसने सन्दूक सिर पर से उतार कर नीचे धर दिया और ज्योंही खोला उसमें लाला को बैठा पाकर चौबे तो हैरान होकर बोला— हाय! इतनी दूर मैं तुम्हें ही सिर पर लाद कर चला आ रहा था? सन्दूक के माल टाल का क्या हुआ?

हंसता हुआ मुन्नालाल बाहर निकल आया और बोला – हूं चौबे भैया! तुम तो मुझे कुएं में ही छोड़ना चाहते थे पर मैं भी कोई कच्ची गोली नहीं खेला था जो इस आसानी से फिर जाता। और रही माल मत्त की बात सो वह बुढ़िया नहले पर दहला निकली। वह हम से भी चार मन गई। उसने ईंट पत्थर भर कर सन्दूक कुएं में डलवा दिया था।

सब असलियत जान कर चौबे खिसिया कर रह गया। फिर हाथ जोड़ कर बोला—भैया राम राम! हम दोनों एक साथ रह कर धंधा नहीं कर सकते। एक दूसरे पर ही हाथ सफाई करने की कोशिश में रहते हैं। तो तुम जाओ पूरब को और मैं जाता हूं पश्चिम को।

लाला बोला— हां ठीक है चौबेजी! अच्छा राम राम!

रास्ते भर चौबे सोचता जा रहा था—मैं तो अपने को ही चतुर समझता था, पर इस बनारसी ठग से तो भगवान बचाये। ○

गायनाचार्य गप्पी गुरुजी

○

इनका परिचय देकर मैं आपका अपमान करना नहीं चाहता । ऐसा कोई दिन नहीं जब आप उन्हें किसी न किसी जगह खड़े, बैठे चलते सोते नहीं देखते । ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ आपकी पहुँच न हो है । आप सर्वव्यापी हैं अगर यूँ कहूँ कि आप सर्वात्मा हैं तो ज्यादा युक्तिसंगत होगा । इनका हुलिया सुनते ही सहसा आपके मुँह से निकल पड़ेगा — ओह ! इनको तो हम बहुत पहले से ही जानते हैं । सगाई शादी, पार्टी सहभोज जागरण सांस्कृतिक कार्यक्रम यहाँ तक कि जिस समय किसी का 'परलोक' की काल आ गया हो उस समय भी हरि-कीर्तनकर्ता के रूप में आपकी उपस्थिति अनिवार्य-सी मालूम होती है । बीच में ही टोक कर मित्र ने कहा — आप पहेलियाँ ही बुझाते जायेंगे या मूल बात पर आने की कृपा भी करेंगे । आखिर आप कहना क्या चाहते हैं ? कहना क्या है ? आप स्वयं ही पीछे की ओर गर्दन घुमा कर देख लो — मैंने धीरे से कहा । सामने कंधों तक लटकती कृष्ण केश राशि जमुना जल की श्यामलता में तैरती-उतराती सेवार सी प्रतीत हो रही है । लम्बी नाक सदा सबको सामने के मार्ग का निर्देश करती रहती है । गिद्ध सी पैनी परन्तु अन्दर धंसी आँखें उनके कोई मापन के साथ ही साथ त्रिलोकी की खबरें दाग भर में लाने में समर्थ हैं । काला रंग कृशकाय अन्दर को धंसा ललाट

रोपे हुए पौधो से दात कभी धोतो, कभी पाजामा कभी पेन्ट कोट कभी चूडीदार पाजामा और कुर्ता कभी अचकन तो कभी बुशशर्ट पहन कर एक आध शागिद के साथ इधर उधर पदल अथवा साइकिल पर घूमना तो आपके लिए साधारण बात है। प्राय आप बडे बडे ग्राफिसस के बगलो के इद गिद चक्कर लगाते रहते है।

मैंने झुककर दोनो हाथ कोहनी तक जोड कर अभिवादन का ढोग रचा— गुरुजी प्रणाम। हाय हाय तुम लोगो को हो क्या गया है। जब देखो तभी स्वर का ज्ञान नही रखत। प्रणाम करते समय भी तुम्हे ध्यान नही रहता कि प्रणाम शब्द म मध्यम तीव्र तथा धवत की दूसरी श्रुति तक पहुचा कर मीड मारनी है। दादरे की ता ही तिकडी म पूरा अभिवादन कर लेना चाहिये। तुम लोग तो सगीत की हत्या करते हो। हजार बार समझाया है और समझाता हू परन्तु लगता है तुम्हारी अक्ल तो घास मजदूरा के साथ हज करने गयी है। अरे सगीत के गदहो, तान के वरियो लय के लम्पटो आखिर सगीत ने तुम्हारा बिगाडा क्या है? जो बोलते हो तो बसुरे गाते हो तो बसुरे और रोते हो तो बसुरे। तुम्हारा तो निर्माण ही बेसुरेपन म हुआ है किया भी तो क्या जाय?

गुरुदेव। भूल हो गयी।

भूल हो गयी अरे बसुरो बेपरों बसुरों। भूल तुमसे नही उस दाई से हो गयी जिसने तुम्हारे जन्म के समय थाली भी बसुरी और बतली बजाई। करू भी तो क्या करू हमारे शिक्षा के कणधार तो कुम्भकर्णी निद्रा म निमग्न हो रहे हैं। मैंने अनेक बार पत्रो म आर्टिकल लिख लिखा पत्री-पत्र छपवाये डेपुटेशन लेकर पहुचा परन्तु वे भी भग की तरग म उफन नजर आते हैं। मैंने कहा— समस्त स्कूलों के पाठ्यक्रम से सभी विषयो को हटा दो और उनके स्थान पर केवल नाद—हा नाद ब्रह्म को ही स्थान दो। देश का कल्याण हो जायगा। तानपूरे की तान स दाग लम्बी

तान कर सो जायेंगे । तबले की ठनक से बहू-बटिया कृत्रिम लज्जा का परित्याग करके घर की चहार दिवारी से बाहर निकलकर पाश्चात्य कुनागनाओ के समकक्ष अपने को निसकोच प्रमाणित करेंगी । प्रारम्भ से ही छात्र छात्राए—ताल और लय का ज्ञान प्राप्त कर लें तो देश का कल्याण हो जाय । घर घर में गायकी पनपेगी भिन्न भिन्न विषयो के अध्यापकों की जरूरत नही रहेगी । देश की आर्थिक दशा को सुधरने का अवसर मिलेगा । छात्र छात्राए (Sangeet Minded) हो जायेंगे—उठेंगे तो लय से—बैठेंगे तो लय से—पढेंगे तो लय से—और तो और चलेंगे तो लय व ताल का ज्ञान अवश्य रखेंगे । बस साहब मेरा मुह ताकने लगे ।

गुरुदेव, जिज्ञासा से मैंने पूछा—इतने सगीत टीचर कहा से आयेंगे जो प्रत्येक स्कूल म सगीत की शिक्षा दे सकें ? फिर वही पुराना अग्रेजों द्वारा बताया हुआ सडा गला विदेशी राग अलापने लगे । अरे भले आदमियो हम लोग फिर क्या जुगराफिया पढायेंगे ? प्रयागशालाओ म हरा कशीश और नीले थोथे का घोल तयार करेंगे ? क्या दिन भर स्कूल मे पडे-पडे चाय की प्यालियां बजायेंगे । इनको करने के लिए तुम ही बहुत हो । हम तो चाहते हैं जीते जी नाद ब्रह्म की कुछ सेवा हो जाय तो ठीक ही है । पर क्या करें तुम लोग तो मेरे ही सामने मेरे ही कार्य-कलापो पर पानी फर रहे हो । जब देश मे विदेशी सगीत का बोलबाला था नब गाना बच्चा को विदेशी भाषा म सिखाया जाता था मातभाषा को भिखारिनी कंगली कह कर पुकारा जाता था उस समय तबलोपुर म कालज का शिलान्यास किया । पूरे पाच वष तक कालेज का संचालन किया । उसम केवल तीन विद्यार्थी आये पर हमने उसकी परवाह थोडे ही की । हमे कोई आर्थिक सहायता थोडे ही लनी थी । हमे तो नाद ब्रह्म स मतलब था । पर पाच वष क कायकाल म हमन तीनो म से एक को सडक छाप बैण्ड मे झाझ बजाने की जगह मिली दूसरे को स्थानीय अनाथालय के अनाथ छात्रों के साथ चन्दा इकटठा करने की सेवा मिली और तीसरे को हमने स्थानीय गर्ल्स

रोपे हुए पौधो से दात कभी धोती, कभी पाजामा कभी पैन्ट कोट चूडीदार पाजामा और कुर्ता कभी अचकन तो कभी बुशशर्ट पहन कर। आध शागिर्द के साथ इधर उधर पैदल अथवा साईकिल पर घूमना आपके लिए साधारण बात है। प्राय आप बड़े बड़े आफिसस के बगलो इद गिर्द चक्कर लगाते रहते हैं।

मैंने भुककर दोनो हाथ कोहनी तक जोड कर अभिवादन ढाग रचा— गुरुजी, प्रणाम। हाय हाय तुम लोगो को हो क्या गया है जब देखो तभी स्वर का ध्यान नही रखते। प्रणाम करते समय भी तु ध्यान नही रहता कि प्रणाम ग न म मध्यम तीव्र तथा धवत की दुम श्रुति तक पहुचा कर मीड मारनी है। गन्धरे की ता ही तिकडी म पू अभिवादन कर लेना चाहिए। तुम लोग तो सगीत की हत्या करते हो हजार बार समझाया है और समझाता हू पर तु लगता है तुम्हारी अर तो नख भ्रदुल्ला क साथ हज करन गयी है। अरे सगीत क गभुआ ता क वरियो लय के लम्पटो आखिर सगीत ने तुम्हारा बिगाडा क्या है ? उ बोलत हो तो बसुरे, गात हो तो बसुरे और रोत हो तो बसुरे। तुम्हार ता निर्माण ही बसुरेपन म हुआ है किया भी तो क्या जाय ?

गुरुदेव। भूल हो गयी।

भूल हो गयी अरे बेसुरो बपरों बसुरो। भूल तुमसे न ो दाई से हो गयी जिसने तुम्हारे जन्म क समय थाली भी बसुरी और बत ल बजाई। क्या कहू भी तो क्या कहू हमारे नि ा के कर्णधार ता कुम्भकर्ण निद्रा म निमग्न हो रहे हैं। मैंने अनक बार पत्रो में आर्टिकल लिख शिक्षा मन्त्री-मन्त्र छपवाये डप्युटेशन लकर पहुचा परतु व भी भग की तरग म उपत नजर आत हैं। मैंने कहा— समस्त स्कूलो क पाठ्यक्रम स सभी विषयों को हटा दो और उसक स्थान पर केवल नाद—हा नाद ब्रह्म को ही स्थान दो। देश का कल्याण हो जायगा। तानपूरे की तान स गजु सम्बी

स्तवन म स्वर आलाप तानो स तयार करके दी तथा उनकी सेवा म सदव उपस्थित हुआ था और सस्वर गायन आरम्भ किया था। पर यह तो यू कहो कि हमारी किस्मत न साथ नही दिया। वरना हम आज क्या नही हो गय होते। वसे तो हम आज अनेक सगीत डिग्रिया भूल बिसरे लोग द जाते हैं जो कि उनका सगीत के प्रति विशेष लगाव प्रकट करता है। हमारे सगीत प्रेम न ही हम सरकारी नौकरी स वचित कर दिया। पर इसम क्या? अपने गहरे अनुभव के बलबूत पर यहा भी सगीत का अखाडा खोल ही लिया जिसस हमारे पेट का तो बसन्त करने का अवसर मिलता ही है इसके साथ-साथ दस पाच और लोगो का भी काम निकलता है। देश के प्रतिष्ठित सगीतज्ञो स पत्र व्यवहार करके हमने सिद्ध कर दिया है कि हम भी उनसे कम नही हैं। रोज दस-बीस छात्रा को आलाप विषयक कुञ्जी करवा ही देते हैं जिसकी चमक से प्रभावित होकर शिक्षा विभाग समाज कल्याण विभाग आदि भेंट स्वरूप कुछ न कुछ अनुदान चढा ही देते हैं।

सहसा मैंने उनके धाराप्रवाह प्रवचन को अवरुद्ध करके पूछा—गुरुदेव हमारे हृदय म कई दिन स एक जिज्ञासा है—'उतावलेपन से गुरुजी ने पूछा—सगीत विषयक हो तो जल्दी पूछो।' मैंने कहा—हमने आपके श्रीमुख स कभी किसी महफिल म सुना नही। तेवर बदल कर गुरुजी न कहा—ओह फिर वही विलायती लोगो की नकल करने लगे। भले आदमी सगीत शिक्षक के लिए जरूरी नही कि वह यत्र-तत्र गला फाड कर तानपूरे के तार तोडकर सितार की कडिया मरोड कर, तबले की पुडिया फोड कर अपने गुण का प्रदर्शन करे। सायद सगीत शिक्षक व सगीतज्ञ म अतर है। सच्चा सगीतज्ञ तो शक्ल स ही पहचान लिया जाता है। उसे गाने बजाने की आवश्यकता नही। अधिक हुआ तो एक नृत्य सगीत कम्प लगाने का एक ही इश्तिहार छपा दिया। समय बसमय रगमच पर ताबडतोड चहलकदमी कर दो-एक अच्छे वाद्य यत्र स छेडछाड कर ली। परदा गिराओ परदा उठाओ का आदेश दे दिया। तिकडमी तौर तरीके से सगीत निर्णायक बन बठे। इसस अगर

स्कूल म पाट टाईम म्युजिक टीचर नियुक्त किया। पर कुछ समयोपरान्त फुल टाईम की जगह पकड ली। तब कुछ सोच कर तबलापुर से तानपुरा श्राना पडा। इसके तीन कारण थ। एक तो विद्यार्थी मिलने सभव न थे। दूसरे सगीत प्रेमियो के प्रभाव से हमारा मन भर गया। और तीसरे पेट के साथ सघष करते करते थक गय थे।

हम ऐसी जगह की तलाश म थ जहा पेट खाली पडा नही रहे। उस भी कुछ कसरत करने का अवसर मिल। कालज का बोड हटाना हमारी बरज्जती थी। और दरवाज पर ताला दिवालियो के लगता है इसलिय हमने कालेज का बोड रहने दिया। और दरवाज चौपट। एसी सूरत म खुन दरवाज दख कर अपने मालिक से मुह छिपान के लिय बशाख न दना की जमातें कालज म प्रविष्ट हो जाती और रात म कानो की फडाफड नथुनो की फडफड और उनकी चरण पादुकाओ की खटाखट से हमारी नीद हराम हो जाती। भला उनको निकालत कस। जहा तक लय और सुर शास्त्र का प्रश्न है व इन दोनो म पूण निष्णात थ। है और रहेग। जब व आलाप भरते हैं तो अच्छे अच्छो के कानो के परद थर्रा उठते—सर भन्ना उठन - परन्तु फटन को आमादा हो जात। कहन का मतलब यह है कि सगीत का ज्ञान प्रारम्भिक ही नही - परिचय परीक्षा के स्तर का था। और यह परीक्षा दिलाना कतव्य है और इन्ही पर जीवन निभर है। इसलिय हम उन्ह सगीत प्रेमी होन के नाते उनके समय व समय दीघ आलापों के भरन के समय उनका मुख बन्द नही कर सकत। इसलिय यही उपयुक्त समझा कि तबलापुर सगीत कालज की सपत्ति इन्ही के सुपुद कर अपन राम अन्य किसी जगह सगीत का सिलसिला पदा करें।

गुरुजी यहा आप कितन साल स (बीच म टोकते हुए) जटा धारी (oh sorry) मरा मतलब साधुओं स नहीं गायनाचाय लक्ष्मीवाहन जी से है। महोदय बोल— अरे इतनी जल्दी भूल गय। जब महाराज जाह्नवी हरिजी का स्वण उत्सव हुआ उस समय मैं उनके स्वागताथ एक

स्तवन म स्वर आलाप तानो मे तयार करने दी तथा उनकी सेवा म सदव उपस्थित हुआ था और सस्वर गायन आरम्भ किया था। पर यह तो यू कहो कि हमारी किस्मत न साथ नही दिया। वरना हम आज क्या नही हो गय होते। वसे तो हम आज उनके सगीत डिग्रिया भूल बिसरे लाग दे जाते है जो कि उनका सगीत के प्रति विशेष लगाव प्रकट करता है। हमारे सगीत प्रम ने ही हम सरकारी नौकरी स वचित कर दिया। पर इसमे क्या ? अपने गहरे अनुभव क बलबूते पर यहा भी सगीत का अखाडा खोल ही लिया जिसस हमारे पेट का तो कसरत करने का अवसर मिलता ही है इसके साथ-साथ दस पाच और लोगो का भी काम निकलता है। देश के प्रतिष्ठित सगीतज्ञो स पत्र व्यवहार करके हमने सिद्ध कर दिया है कि हम भी उनसे कम नही हैं। रोज दस-बीस छात्रो को आलाप विषयक कुश्ती करवा ही देते हैं जिसकी धमक स प्रभावित होकर शिक्षा विभाग समाज कल्याण विभाग आदि भेंट स्वरूप कुछ न कुछ अनुदान चढा ही देते हैं।

सहसा मैंने उनके धाराप्रवाह प्रवचन को अवरुद्ध करके पूछा— गुरुदव हमारे हृदय मे कई दिन स एक जिज्ञासा है—'उतावलेपन से गुरुजी न पूछा— सगीत विषयक हो तो जल्दी पूछो।' मैंने कहा— हमने आपके श्री मुख स कभी किसी महफिल म सुना नही।' तेवर बदल कर गुरुजी ने कहा— 'ओह फिर वही विलायती लोगो की नकल करने लगे। भले आदमी सगीत शिक्षक के लिए जरूरी नही कि वह यत्र-तत्र गला फाड कर तानपूरे के तार तोडकर सितार की कडिया मरोड कर, तबले की पुडिया फोड कर अपने गुण का प्रदशन करे। साथही सगीत शिक्षक व सगीतज्ञ मे अतर है। सच्चा सगीतज्ञ तो शक्ल से ही पहचान लिया जाता है। उसे गाने बजाने की आवश्यकता नही। अधिक हुआ तो एक नत्य सगीत कम्प लगाने का एक ही इश्तिहार छपा दिया। समय बसमय रगमच पर तावडतोड चहलकदमी कर दो एक अच्छे वाद्य यत्र से छेडछाड कर लो। परदा गिराओ परदा उठाओ का आदेश दे दिया। तिकडमी तौर तरीके से सगीत निर्णायक बन बठे। इससे अगर

आगे बढने का हौसला हो तो समय समय पर स्थानीय संगीत प्रेमियो को अपने घर में आमन्त्रित करके चाय पिला दो। हम लोगो से तुम अधिक आशा रखते हो ? तुम्हारी अकल राजाजी की तरह सठिया गई है तुम्हारी नाम अभी है नादानी है तुम्हें अपना इलाज कराने के लिए डॉक्टर लाहिया के पास जाना चाहिये। संगीतज्ञ होने का मतलब यह थोड़े ही है कि हम जहा तहा गला फाडते रहें। बस डानडा का जमाना है। सारहीन लारहीन लीचिंग पाऊडर मिला। खटाई से गला तो पहले ही खराब हो गया है ऊपर से चाय की खश्की से फफडो म सूजन आ गई है। अर्थात आप स नेत्रो के आगे अधेरी छा जाती है और तुम लोग आशा करते हो सुमधुर संगीत सुनने की। उनके धारा प्रवाह प्रवचन का बाध बनते हुए मैंने कहा— गुरुवर आज प्रात सवारी ? वे मेरे आशय को समझ गये थे। चौकते हुए बोल— अरे अरे गजब हो गया। मुझे संगीत प्रशि ण केन्द्र खोलने क सम्बध म सिविल ला स म शिक्षाधिकारियो के बगलो पर जाना था परतु अब तो— क्या गुरुदेव अभी तो १० ही बजे है।

अरे अब अफसर लोग बगलों से दफतरों को चले गये होंगे।

गुरुदेव आप तो दफ्तरो म भी पहुच रखते हैं फिर क्या चिन्ता करनी है ?

हा यह बात तो ठीक है परतु संगीत के प्रति जितनी रुचि महिलाओ मे देखी जाती है वह पुरुषों म कहा ? ये तो महिलाए ही हैं जो हमारे संगीत की कद्र करती हैं वरना इन पुरुषो के भरोसे तो संगीत साफ हो गया होता।

मैने हाथ जोड़कर
म कहा— ओह तभी आ
बनने के प्रयास म कर -
क्या कहा ?

५ विनीत

मेरी खोपडी पर पूण प्रहार करें मैं बहुत दूर भाग निकला था। बाद म मेरे मित्र से मालूम हुआ कि उस दिन गुरुदेव बडे बिगडे। फिर किसी तरह उन्हे यह आश्वासन मिलने पर शात हुए कि अगली सगीत परीक्षा म मेरे मित्र एव उनकी पत्नी दोनो बठेंगे और शीघ्र ही गुरुदव की सगीतशाला म प्रवेश हेतु प्रार्थी होंगे तब वह जाकर कुछ नरम पडे। कहने लगे—'तुम केवल फाम भर देना बाकी मैं सब अपने आप दख लूगा। आखिर परीक्षक भी हम लोगो म स ही तो होते हैं। अधिकतर तो मेरे गुरु भाई या शिष्य ही हैं। तुम तो कल ही अपनी फीस जमा करवा दो। और फिर काफी समय तक अपनी सस्था के निरीक्षण हेतु आये हुए भिन्न भिन्न महानुभावो को किस प्रकार चकमा देकर प्रभावित किया आदि पर बातें करते रहे। फिर बोले— आज उसने तो हमारा मूड ही आफ कर दिया। सगीत शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना एव आर्थिक सहायता हेतु फिर कभी जाऊगा। हा तुम प्रवश फाम जरूर भर देना। तुम्हारे पडोस म तो बहुत-सी लड कियां सगीत सीखती हैं। फिर उन्हे अपनी सस्था म मित्र ने बीच ही म बात काटते हुए बताया कि वे कहती हैं— वहा तो समय बरबाद होता है सारे समय गुरुदव अपने विगत जीवन के कटु अनुभव सुनाते रहते हैं। हम उनके सस्मरण नही सुनने सगीत सीखना है। बीच ही म गुरुदव बोले— जाने दो जाने दो उन्हे अपने समय का सदुपयोग करने दो। पर हा देखो, फीस जरूर लेते आना।'